भारत-मन्त्री

मि० मॉन्टेगू

के

भारतीय प्रश्नों पर विचार



अनुवादक

पं० बाँकेबिहारी त्रिवेदी

बी. ए., एल-एल. बी.

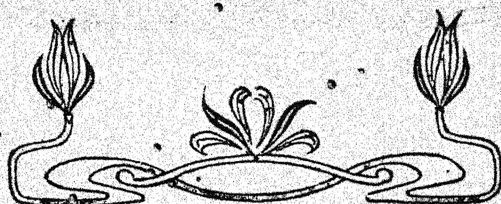
प्रकाशक

पं० राधाकृष्ण पाण्डेय

प्रथम बार १००० | प्रयाग १९१७ | मूल्य ।-) पांच आने

पं० सुदर्शनाचार्य्य, बी० ए० के प्रबन्ध से
'सुदर्शन' प्रेस, प्रयाग में मुद्रित।

विषय-सूची



"The history of this war shows that you can rely upon the loyalty of the Indian people to the British Empire—if you ever before doubted it! If you want to use that loyalty you must take advantage of that love of country which is a religion in India, and you must give them that bigger opportunity of controlling their own destinies, not merely by councils which cannot act, but by control, by growing control, of the Executive itself."

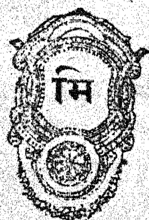
Mr. E. S. Montagu in the House of Commons.

भारत-मन्त्री

मि० मॉन्टेगू



प्रस्तावना



स्टर ई० एस० मॉन्टेगू का जन्म सन् १८७९ में हुआ था। इस तरह यद्यपि आपकी अवस्था अभी ४० वर्ष की भी नहीं है तथापि आपकी गणना विलायत के उच्चकोटि के राजनीतिज्ञ पुरुषों में की जाती है। केवल इसी एक बात से हमारे पाठक आपकी योग्यता का अन्दाज़ा लगा सकते हैं। सन् १९०६ में कैम्ब्रिज शायर से निर्वाचित किये जाने पर आपने पार्लामेन्ट में प्रवेश किया था। इस समय आपकी अवस्था केवल २७ वर्ष की थी। इसी समय अनुदार-पक्ष का पतन हुआ और शासन की बागडोर उदार-पक्ष के हाथ में आई। उदार-पक्ष ने जो मंत्रिमण्डल बनाया उसमें मिस्टर मॉन्टेगू को भी स्थान मिला। यह मि० ऐस्किथ के समान श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ के पार्लामेन्टरी सेक्रेटरी हुए।

मि० मॉन्टेगू बड़े ही बुद्धिमान व दूरदर्शी राजनीतिज्ञ हैं। आप में ब्रिटिश चरित्र की दृढ़ता व आत्मनिष्ठा ने अच्छा विकाश पाया है। स्वभाव से ही आप उदार विचार के हैं। परिश्रमी भी आप एक ही हैं। जिस प्रश्न का आप अध्ययन करने लगते हैं उसके सम्बन्ध की सब बातों का जब तक आप विचार नहीं कर लेते तब तक विश्राम नहीं लेते। इसी विशेषता के कारण पार्लामेन्ट में इतनी आपको सफलता

प्राप्त हुई है और इतना जल्द यह श्रेष्ठ स्थान आपको प्राप्त हो सका है।

भारत से आपका पुराना सम्बन्ध है और इस देश की आपने सेवा भी बहुत की है। उदार-पक्ष को जिस समय शासन भार मिला था उस समय हमारे देश में बंग-भंग के कारण बड़ी गड़बड़ फैल रही थी। यहाँ की राजनैतिक अवस्था उस समय ऐसी नाज़ुक हो रही थी कि उसे सँभा-लने के लिये एक ऐसे राजनीतिज्ञ की आवश्यकता थी जो अनुभवी हो। इन्हीं सब बातों का विचार करके अरसठ वर्ष के बूढ़े मि० जॉन मॉर्ले भारतमंत्री के पद पर नियुक्त किये गये थे। मि० मॉर्ले अपनी योग्यता के लिये जगत में प्रसिद्ध हैं। मि० मॉर्ले के भारतमंत्री होते ही हमारे देश के भाग्य ने पलटा खाया। क्योंकि उस समय तक यह चाल सी थी कि भारतमंत्री के पद पर उत्तम श्रेणी के राजनीतिज्ञ नहीं नियुक्त किये जाते थे। पर मि० मॉर्ले के इस पद पर नियुक्त किये जाने से यह नियम सदा के लिये टूट गया। मि० मॉर्ले ने भारत के कल्याण के लिये जो कुछ किया वह सब लोग जानते ही हैं।

जब तक मि० मॉर्ले कामन्स सभा में थे तब तक वह स्वयं उन आक्रमणों को झेलते रहे जो उन पर व उनकी नीति पर किये जाया करते थे। पर जब वह लार्ड मॉर्ले होकर लार्ड सभा में चले गये तब यह कार्य अन्डर-सेक्रेटरी को करना पड़ा। उस समय इस पद पर मास्टर-आफ़-एलीबैंक थे। यह एक वयोवृद्ध व अनुभवी सज्जन थे इस कारण येन केन प्रकारेण यह कार्य चलता गया। पर यह भी जब इस पद से हटा कर दूसरे पद पर नियुक्त किये गये तब एक ऐसे अन्डर-

सेक्रटरी की आवश्यकता हुई जो अपने प्रधान के गुरुतर बोझ को कामन्स सभा में उठा सके। इस कठिन कार्य के लिये मि० मॉन्टेगू पसन्द किये गये। इस प्रकार फरवरी, १९१० में मि० मॉन्टेगू भारत के अन्डर-सेक्रेटरी नियुक्त हुए। इस समय तक भारत के राजनैतिक आकाश से अशान्ति के बादल दूर नहीं हुए थे, इस कारण अन्डर-सेक्रेटरी का कार्य असाधारण कठिनाइयों से पूर्ण था। बहुत से दूसरे लोग ऐसे समय में इस पद को स्वीकार करने में झिझकते, फिर ऐसी अवस्था में जब यह कार्य उन्हें पार्लामेन्ट में प्रवेश करते ही दिया गया होता। पर मि० मॉन्टेगू ने, यद्यपि उन्हें पार्लामेन्ट में प्रवेश किये अभी चार ही वर्ष हुए थे, इस पद को स्वीकार करने में ज़रा भी झिझक नहीं दिखाई। उन्होंने भारत से सम्बन्ध होते ही भारतीय प्रश्नों का अध्ययन करना आरम्भ कर दिया क्योंकि उन्हें अपने प्रधान के आदेशानुसार कामन्स सभा में सब प्रश्नों का उत्तर योग्यता के साथ देना था।

फरवरी १९१० में मि० मॉन्टेगू भारत के अन्डर-सेक्रेटरी नियुक्त हुए थे और फरवरी १९१४ तक आप इस पद पर रहे। इस प्रकार चार वर्ष तक आपका भारत से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। इन चार वर्षों में आपको भारत की राजनैतिक परिस्थिति का सच्चा ज्ञान हो गया। इस ज्ञान सम्पादन के लिये आप ने भगीरथ प्रयाश किया है। ब्लूबुक्स और इन्डिया-आफ़िस के द्वारा भारत की परिस्थिति का जितना ज्ञान विलायत में बैठे एक मनुष्य को हो सकता है उतने ज्ञान से जब इन्हें सन्तोष न हुआ तो इन्होंने भारत आकर यहाँ अपनी आँखों से देख कर सच्चा ज्ञान प्राप्त करने का विचार

किया। इस विचार से प्रेरित होकर सम्राट की भारत-यात्रा के बाद आप भारत में भ्रमण के लिये आये। यहाँ घूम फिर कर आप भारत की परिस्थिति को अपनी आँखों देख कर विलायत लौट गये। आपके इस अध्ययन और परिभ्रमण से भारत को बहुत लाभ होने की आशा है। अब आप भली प्रकार समझ गये हैं कि इस देश की आभ्यन्तरिक शासन-पद्धति में किस प्रकार के सुधार करने की आवश्यकता है और भारतमंत्री का भारत-सरकार पर किस प्रकार का प्रभुत्व होना चाहिये।

फरवरी १९१४ में मि० मॉन्टेगू फाइनेन्शल-सेक्रेटरी नियुक्त किये गये और इस कारण आपका सम्बन्ध भारत से कुछ समय के लिये टूट गया। पर अगस्त मास में ही वह समर आरम्भ हुआ जिसके कारण यह आवश्यकता उपस्थित हो गई कि सब दलों के नेताओं के योग से एक सम्मिलित मंत्रि-मण्डल बनाया जाय, इसलिये लार्ड क्रू और मि० रौबर्ट को मंत्रि-मण्डल से अलग होना पड़ा। इनके स्थान में भारत मंत्री होकर मि० चेम्बरलेन और उप-मंत्री होकर लार्ड इस्लिंगटन मंत्रि-मण्डल में सम्मिलित हुए। यह दोनों सज्जन अनुदार पक्ष के थे और भारत सम्बन्धी इनका ज्ञान भी अल्प था। पर इस समय लार्ड हार्डिञ्ज के समान प्रतिभाशाली राजनीतिज्ञ भारत के वाइसराय थे इस कारण अप्रिल, १९१६ तक भारत की स्थिति में कोई हानिकारक लक्षण प्रगट नहीं हुए।

अप्रिल, १९१६ में लार्ड हार्डिञ्ज के भारत से अवसर ग्रहण करने पर भारत के शासन की बागडोर एक दम अनुभव-हीन लोगों के हाथ में जा पड़ी। इसका फल यह हुआ

कि 'पीछे हटाने वालों' का प्रभाव बढ़ गया और यह लोग लोक-मत व उसके सूत्रधार नेताओं को पदद्लित करने का उद्योग करने लगे। इससे लोक-मत एकाएक आक्षुभित हो उठा और इस बदली हुई परिस्थिति का मुक़ाबिला करने के लिये प्रबल आन्दोलन होने लगा। इसी समय मेसोपोटेमिया कमीशन ने भारतीय शासन की जो पोल खोली उससे अच्छे समय में भारत को सहायता मिली। इस कमीशन की रिपोर्ट पर पार्लमिन्ट में जो बहस छिड़ी उसमें मि० मॉन्टेगू ने भी भाग लिया था। इस समय इङ्गलैंड जो उदासीनता भारत के शासन में दिखा रहा है उसकी अच्छी खबर लेने में इन्होंने बड़ी निर्भीकता दिखाई। आपकी यह स्पीच पढ़ने और मनन करने लायक है।

मेसोपोटेमिया कमीशन की रिपोर्ट में कुछ ऐसी बातें प्रगट की गई थीं, जिसके कारण मि० चेम्बरलेन अपना पद त्याग कर इन्डिया आफ़िस से अलग हो गये। मि० चेम्बर-लेन के पद त्यागने पर मि० मॉन्टेगू भारत-मन्त्री बनाये गये। इस तरह अब हम चिरपरिचित मि० मॉन्टेगू को भारत-मंत्री के उच्च पद पर विराजमान पाते हैं। हमें मि० लायड जॉर्ज की इस कृपा के लिये उनका कृतज्ञ होना चाहिये। हम उनको हृदय से धन्यवाद देते हैं कि इस नाज़ुक समय में उन्होंने भारत के शासन की बागडोर एक ऐसे पुरुष के हाँथ में दी है जो भारत की परिस्थिति को भली भाँति समझता है। आपके इस कार्य से साम्राज्य का जो उपकार होने की सम्भा-वना है वह अभी शब्दों में अंकित नहीं किया जा सकता।

इस समय साम्राज्य की सेवा करने का जैसा सुयोग मि० मॉन्टेगू को मिला है वैसा विरले ही भाग्यवान पुरुषों को

मिलता है। उन्होंने इस थोड़े समय में ही यह स्पष्ट कर दिया है कि वह इस सुयोग को हाथ से जाने न देंगे। भारत के सम्बन्ध में साम्राज्य सरकार की क्या नीति है इसकी घोषणा कर देने के लिये बड़ा आन्दोलन हो रहा था किन्तु मि० चेम्बरलेन वह घोषणा न कर सके। पर भारत-मंत्री होते ही मि० मॉन्टेगू ने २० अगस्त को युगान्तर उपस्थित करने वाली नीति की घोषणा कर दी। अब इस नीति को कार्यरूप में किस प्रकार से परिणत किया जाय इस बात का विचार करने के लिये आप स्वयं भारत आ रहे हैं। भारत में परामर्श करके जो नीति निश्चित होगी उसी के परिणाम स्वरूप प्रस्ताव पार्लामेन्ट में पेश किये जायँगे।

इस समय भारतवासियों को आपसे अच्छी आशा है। इनकी दृष्टि इस समय आप ही पर है। इस समय प्रत्येक भारतवासी यह जानने का उद्योग कर रहा है कि आपके भारत के विषय में क्या विचार हैं। जो लोग अँगरेजी जानते हैं वह आपकी भारत सम्बन्धी स्पीचों को पढ़ कर आप पर मुग्ध हो रहे हैं। पर हमारे वह भाई जो केवल हिन्दी ही जानते हैं आपके विचारों से भली भाँति परिचित नहीं हैं। इस कारण मैं मि० मॉन्टेगू की उत्तम उत्तम स्पीचों का हिन्दी अनुवाद लेकर अपने हिन्दी-भाषा-भाषी भाइयों के सामने उपस्थित होता हूँ। आशा है वे इसे स्वीकार करेंगे।

—अनुवादक

प्रयाग,
ता० १-११-१७.

उदार-नीति और भारत

कैम्ब्रिज में व्याख्यान

(गिल्डहाल, फरवरी २८, १९१२)

माननीय ई० एस० मॉन्टेगू एम० पी०, भारत के अन्डर-सेक्रेटरी-आफ़-स्टेट ने २८ फरवरी को कैम्ब्रिज की यात्रा की और गिल्डहाल में कैम्ब्रिज और काउन्टी लिबरल-क्लब के सभापति की हैसियत से एक बड़ी भारी सभा के सामने व्याख्यान दिया। इस सभा में सभापति का आसन डाक्टर वेब ने ग्रहण किया था।

मि० मॉन्टेगू ने आरम्भ में कुछ घरेलू प्रश्नों पर विचार करके कहा—

सच्चा साम्राज्य सङ्गठन



आप लोगों का ध्यान साम्राज्य संस्था की उपयोगिता सम्बन्धी दूसरी शाखा—अपनी समुद्र के पार सम्बन्धी कार्रवाइयों—की ओर ले जाना चाहता हूँ। मैं यह दावा करने जा रहा हूँ, और मैं समझता हूँ, सिद्ध करने भी, कि साम्राज्य जैसा हम उसे समझते हैं, और जिस कल्पना की वह पूर्ति कर रहा है, वह उदार पक्ष का निर्माण किया हुआ है। अंगरेज़ों

की साम्राज्य-कल्पना उनके पूर्व पुरुषों की साम्राज्य कल्पना, व अन्य देशों की साम्राज्य-कल्पना से भी, बिलकुल निराली है। वह एक ऐसे लक्ष्य की कल्पना है जिसके कारण साम्राज्य संस्था अनुचित नहीं कही जा सकती। हमारा झण्डा इतने मील भूमि पर आज दिन उड़ रहा है और इतने लक्ष मनुष्य सम्राट की प्रजा हैं; इसका उत्सव अर्थात् साम्राज्य दिन का उत्सव मनाते समय झण्डे उड़ाने, गीत गाने, व नाचने से ही आजकल के विचारवान लोगों को सन्तोष न करना चाहिये। प्रायः भूमि अनुदार शासन के समय जीती गई है, पर इसे अनुदार राजनीतिज्ञों ने नहीं जीता है। इसे जीतने वाले अंगरेज़, स्कॉच व—इस सुअवसर पर मैं आप लोगों को स्मरण करा देना चाहता हूं—आइरिश वीर पुरुष हैं। यह भूमि ऐसी कल्पना के लिये जीती गई है जो किसी ख़ास पार्टी को नहीं जानती है। (सुनो! सुनो!!)

पर यह भूमि का नहीं, हृदयों का प्रश्न है। यह हुकूमत करने व पददलित करने का प्रश्न नहीं है। यह साम्राज्य के भिन्न भिन्न भागों में मैत्री-भाव, सहकारिता, और दायित्वपूर्ण स्वतन्त्रता देखने का प्रश्न है। अब तक साम्राज्यों के नाश होने या नाश किये जाने के दो कारण देखे गये हैं। पहिला कारण घर में हीनता का घुस आना है; पर इससे युद्ध करने के लिये पिछले छः वर्षों में इस देश ने बहुत से कानून बनाये हैं। दूसरा कारण न्याय करने से इन्कार करना व मदान्ध होकर ज़ुल्म करना है, जिसके कारण शासन शकट के जुए का भार अभिनववयस्क भागों के लिये दुखदाई हो जाता है। हमें अपने शासन व कानून को यहाँ घर पर इस प्रकार से प्रयोग करना चाहिए कि वह उन बन्धु राष्ट्रों के लिये, जो हमारे

साथ साम्राज्य में सम्मिलित हैं, आदर्श का काम दें। हमें अपने साम्राज्य के लक्ष्य की ऐसी कल्पना करनी चाहिए कि हम साम्राज्य भर में स्वराज्य सम्बन्धी संस्थाओं का और उन सब बातों का, जिनका समावेश उस अपूर्व शब्द "न्याय" में होता है, अधिक प्रसार कर सकें। अगर यह सत्य है तो आप मेरे साथ इतिहास में प्रवेश करने का कष्ट उठावें। मुझे आशा है कि मैं आपको यह दिखा सकूंगा कि साम्राज्य की स्वतन्त्रता उदार नीति का ही प्रसाद है; और इस उदार नीति ने ही अनुदार-पक्ष के तीव्र-विरोध करते रहने पर भी साम्राज्य की स्थिरता का बीमा करा लिया है।

कनाडा और दक्षिण अफ्रीका

कनाडा निवासियों की राजभक्ति कनाडा निवासियों की स्वतन्त्रता पर ही अवलम्बित है। तोभी लार्ड स्टैन्ले ने १८३६ में कामन्स सभा में यह कह कर अनुदार-पक्ष के मत को व्यक्त किया था कि "कनाडा निवासियों की माँग पूर्ण करने का क्या फल होगा? एक प्रजातन्त्र राज्य की स्थापना हो जायगी। बहु-मत रखने वाली ज़बर्दस्त पार्टी की दुखदाई शक्ति के लिये जो एक रुकावट थी, वह भी अब इस कृपादान के कारण हट जायगी। यह पार्टी भी ऐसी है कि इसमें जन-संख्या ही अधिक है, धन शिक्षा और काम करने के उत्साह में यह कम संख्या वाली पार्टी से बहुत हीन है।" अगर कारसन की अंगरेज़ी में इन विचारों का अनुवाद किया जाय तो आप लोग सोच सकते हैं कैसे कहा जायगा—"ओनटेरियो लड़ाई करेगा और ओन-टेरियो सही भी माना जायगा।" (हँसी के साथ सुनो! सुनो!!) इसके बाद लार्ड सभा में लार्ड विलिङ्टन थे। इन्होंने कहा था—स्थानिक दायित्वपूर्ण स्वराज्य और ग्रेट-ब्रिटेन की बादशाही-

यह दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं"। पर आपने देखा! कनाडा ने साम्राज्य से अलग होने या प्रजातन्त्र स्थापित करने की ओर अभी तक एक डक भी नहीं बढ़ाया है, यद्यपि कनाडा और पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ, उन्नतिशील और शक्तिशाली प्रजातन्त्र को अलग करने वाली एक मनोनीत रेखा ही है। साम्राज्य में स्वराज्य के साथ सम्मिलन के बन्धन ने ही कनाडा को इतने अधिक प्राकृतिक व राजनैतिक प्रलोभन होने पर भी हमारे साथ बांध रक्खा है। इस घटना से अनुदार पक्ष को साम्राज्य की इमारत किस तरह से बनानी होगी इसका सबक सीख लेना चाहिये था, पर उन्होंने कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की है।

जब इस घटना को हुए ५० वर्ष से भी अधिक हो चुके थे, जब कनाडा अधिकाधिक राजभक्त व उन्नत हो रहा था तब दक्षिण अफ्रीका का प्रश्न उपस्थित हुआ। क्या अनुदार पक्ष ने उस समय तक साम्राज्य निर्माण का कार्य सीख लिया था? उस समय भी लिटिलटन की व्यवस्था इस पक्ष की सब से अच्छी कृति थी। इस व्यवस्था को डच लोगों ने स्वीकार नहीं किया, इससे पद पद पर संघर्षण व अप्रसन्नता का प्रादुर्भाव हुआ। जब सौभाग्य व ईश्वर की कृपा से इस पक्ष के शासन का अन्त हुआ तब सर हेनरी कैम्पबेल ने स्वराज्य के उदार सिद्धान्तों का लाभ दक्षिण अफ्रीका को देकर "साउथ अफ्रिकन यूनियन" की स्थापना की। यह एक दूसरा कनाडा अफ्रीका में हो गया; और इसने दुनियाँ में, मेरे विचार से, ब्रिटिश-शासन की नीति को निर्दोष प्रमाणित कर दिया। तोभी इस दल के नेता मि० बालफूर ने हमारी नीति को "वर्तमान समय की भीषण साहसशीलता का प्रयोग" बतलाया और इस प्रयोग के उत्तरदाता बनने की ज़िम्मेदारी से इन्कार

किया। इस प्रकार एक बार फिर हम अनुदार-पक्ष को उदार संस्था के विरुद्ध अपनी आवाज़ उठाते देखते हैं। पर मेरे ख़्याल से इस समय के लिये साम्राज्य सङ्गठन का केवल यही एक उपयुक्त सिद्धान्त है।

हिन्दुस्तान की पारी

ख़ैर! जब स्वराज्य के सिद्धान्तों का इतने उग्ररूप में प्रयोग हो चुका तब भारत की पारी आई और लार्ड मॉर्ले ने १६०६ में इण्डियन काउन्सिल्स ऐक्ट प्रस्तुत किया। इसमें कोई दूराधिरूढ़ व्यवस्था नहीं थी। इसमें डरते डरते इस बात का उद्योग किया गया था कि शासितवर्ग का थोड़ा सम्मिलन शासकवर्ग के साथ हो जाय और जनता को भारत में भी अपना मत प्रगट करने का अवसर मिले। पर हमने भूतपूर्व लार्ड पर्सी को कामन्स सभा में यह कहते सुना था कि "इसलिये, यद्यपि उन अनिष्टों से गवर्नमेण्ट को सचेष्ट करा देना हमारा कर्तव्य है जो कि हमारे विचार से, उदार-पक्ष के बहुत से प्रस्तावित कार्यों की बदौलत होंगे, पर हमारी सूचना पर काम करने या उसका अनादर करने का उत्तरदायित्व गवर्नमेन्ट पर ही होगा।" और हमने सदैव की भाँति लार्ड कर्ज़न की तीव्र आलोचना भी सुनी थी। ख़ैर! इण्डियन काउन्सिल ऐक्ट की सफलता पर यद्यपि किसी को सन्देह नहीं हो सकता, पर अनुदार-पक्ष ने इसपर भी कोई उन्नति नहीं दिखाई। अभी हाल में साम्राज्य-निर्माण-कुशलता का परिचय देहली में दूराधिरूढ़ सुधारों की घोषणा करके दिया गया है। इन सुधारों की घोषणा ही श्रीमान् सम्राट की सफल भारत-यात्रा की मुख्य विशेषता थी। मेरे लिये इन सुधारों का विचार करना अनुचित होगा अगर मैं अपने वक्तव्य की प्रस्तावना में अपने व्यक्तिगत

विश्वास को एक दो शब्द कह कर प्रकाश न करदूँ। मेरा विश्वास है कि इस भारत-भ्रमण की आशातीत सफलता श्रीमान् सम्राट की प्रभावशाली महापुरुषता के प्रभाव का फल है। श्रीमान् सम्राट की भारत यात्रा के उस आनन्द से जो कि भारतवासियों को अपनी अगाध राजभक्ति दिखाने का अवसर पाने से हुआ, वह उत्तम परिणाम जो इस यात्रा से होंगे कहीं अधिक दिन तक जीवित रहेंगे। लेकिन क्या हमारी नीति, क्या नवीन प्रान्तों का सङ्गठन, और क्या देहली—आपने एक राजकीय विभाग के मन्त्री को अपना सभापति बनाया है, इसलिये आपने खुद यह भार अपने ऊपर ले लिया है कि मैं इस अवसर को अपने आलोचकों को उत्तर देने के काम में लाऊँ। मैं ऐसा करने के लिये विवश हूँ और मेरा ऐसा करना आज के विषय के अनुकूल भी है।

दरबार की घोषणायें

कामन्स सभा में मि० बोनर-ला ने सिर्फ़ दो दोष दिखा कर अपनी घोषणा सम्बन्धी आलोचना को समाप्त किया है। पहली आपत्ति आपकी यह है कि धन बहुत व्यय होगा, और दूसरी आपत्ति यह है कि बंग-भंग रद्द कर देने से हमारे रुआब (Prestige) को हानिकारक धक्का पहुंचा है। इसके विचार में मैं सिर्फ़ इतना ही कहूँगा कि खर्च की शिकायत करना, जैसा कि पहली आपत्ति में दिखलाया गया है, आजकल के अनुदार-पक्ष की एक टकसाली शिकायत है। ये लोग आदर्श कल्पना, कविता, स्वतन्त्रता व भावना आदि से अनभिज्ञ हैं। इन्हें साम्राज्य एक नफ़े नुकसान का हिसाब मात्र है। इन्हें दस बीस लाख रुपया इस बात से भी अधिक

प्यारा है कि राजधानी को स्थानान्तरित करने से भारत को एक ऐतिहासिक स्थान में फिर एक नवीन शहर प्राप्त हो रहा है; और जिसके प्राप्त होने से ट्रडीशन-प्रिय समस्त भारतीय प्रजा को हम आनन्द प्रगट करने का अवसर दे रहे हैं। और रुआब—ऐ भारत! तेरा इतिहास कितना अधिक सुख-मय होता अगर अंगरेज़ी शब्दों में यह रुआब का समानार्थक शब्द न होता। लेकिन इसमें ही तो अनुदार-साम्राज्य-नीति का सबसे निकृष्ट भाव प्रगट होता है। ध्यान देने की बात है। हम भारत में अन्याय का संस्कार करने के लिये नहीं हैं, ग़लती करके फिर उसे सुधारने के लिये नहीं हैं, और अनुभव से लाभ उठाने के लिये भी नहीं हैं। वहाँ तो हमें अपनी ग़लती पर जमे रहना चाहिये, और केवल इतने से लाभ के लिये लोकमत का अपमान करना चाहिये कि हम यह कह सकें "मैंने जो कुछ कहा, कहा।" मैंने दूसरे स्थानों में दूसरे मौकों पर भी निर्भीकता पूर्वक इस "रुआब" पर अपनी सम्मति प्रगट की है। हम भारत में इस शब्द की सहायता से शासन नहीं कर रहे हैं। हमें भारत में न्यायपूर्ण संस्थाओं की सहायता से और जैसे जैसे समय बीतता जाता है शासितवर्ग की मर्ज़ी से शासन करना चाहिये। इस मर्ज़ी का आधार यह विश्वास होना चाहिए कि गवर्नमेन्ट उनकी न्यायपूर्ण आकांक्षाओं को जैसे जैसे देश की उन्नति होती जायगी पूर्ण करने से इन्कार न करेगी। लेकिन मि० बोनर-ला भारत के विषय में कुछ नहीं जानते। वह इस बात को शायद खुद सब से पहिले स्वीकार कर लेंगे। इसलिये हमें अपने प्रस्तावों की सविस्तर आलोचना सुनने के लिये लार्ड सभा की ओर ध्यान देना चाहिये।

लार्ड कर्ज़न का भाव

लार्ड-सभा में श्रेष्ठ लार्ड कर्ज़न के मुकाबले में खड़ा होना पड़ता है। महाशयो! मेरे स्थान में जो व्यक्ति दो वर्ष तक रह चुका हो वह व्यक्ति इतना मूर्ख कभी नहीं हो सकता कि लार्ड कर्ज़न की उस कार्य के लिये जो उन्होंने भारत के लिये किया है विना प्रशंसा किये हुए व्याख्यान-मञ्च पर खड़ा हो कर उनके बारे में कुछ कहे। भारतवर्ष आपके असीम साहस, अविश्रान्त-परिश्रम व अतुलनीय आत्म-निर्भरता का चिरकृतज्ञ रहेगा। पर मैं आपसे नम्र होकर यह पूछना चाहता हूं कि भारत से लौट आने के बाद आपने अपना समय किस प्रकार विताया है। जो कुछ किया है उसी के गुण गान करने में न— यह कहने में नहीं कि 'हमने यह किया है', बल्कि यह कहने में कि 'यह मेरा काम है'। पिछले सप्ताह में लार्ड कर्ज़न ने जो एक लम्बी चौड़ी वक्तृता लार्ड-सभा में दी थी उसमें पार्लामेन्ट सम्बन्धी शासन के प्रति आपने केवल मुखसक्ति दिखाई है, यद्यपि उस समय लार्ड मिडिलटन आपके बगल ही में बैठे हुए थे। और यही लार्ड मिडिलटन, जो कि उस समय केवल मि० ब्रौडरिक थे, बहुत अंशों में परिभाषानुसारेण उस कर्ज़ोनियन शासन के उत्तरदाता थे, न कि लार्ड कर्ज़न। पर इस भाषण में आपने भारत-मंत्री के नाम तक को कहीं स्थान नहीं दिया, यद्यपि जितने समय तक मैं आज बोलूंगा उससे कहीं देर तक वह बोलते रहे थे। लार्ड मिडिलटन ने भी उस समय कुछ नहीं कहा। लार्ड कर्ज़न ने उस कार्य का, जिसका उन्हें इतना गर्व है, ऐसे स्थान से सिंहावलोकन किया है कि जिसमें उन्हें अपना ही प्रकाश दीख पड़े और हर एक काम में जिसे उन्होंने किया है उन्हीं की छाया नज़र आवे। आपका उपदेश यह नहीं है कि

"भारत के कामों में हस्तक्षेप न करो" आपका आदेश यह है कि "कर्ज़ोनियन भारत को ठीक वैसा ही रहने दो जैसा लार्ड कर्ज़न ने उसे छोड़ा है"। क्यों? लार्ड कर्ज़न ने जो कुछ किया है उसमें फेरफार करने से हमारा रुआब जाता रहेगा। मैं आपसे गम्भीर भाव में पूछता हूं कि लार्ड कर्ज़न के भाषण की आलोचना में एक राह चलता आदमी जो भारत को नहीं जानता है क्या कहेगा। मैं ख्याल करता हूं वह यही कहेगा कि "हम पढ़ते हैं कि इस व्यवस्था का भारत व इङ्गलैण्डमें—क्या राजनीतिज्ञ, क्या सिपाही, क्या सरकारी नौकर, क्या अख़बार, क्या व्याख्यानदाता—सभी ने स्वागत किया है, इसलिये हम समझते हैं कि यह व्यवस्था बिलकुल निकम्मी नहीं है"। लार्ड कर्ज़न ने यद्यपि सब बातों का सविस्तर वर्णन किया है, यद्यपि वह अच्छी तरह जानते थे कि भारत में जनता के विचार बहुत जल्द क्षुब्ध हो-जाते हैं, यद्यपि वह जानते थे कि उनकी स्पीच का एक एक शब्द न कुछ समय में तार द्वारा भारत भर में फ़ैल जायगा, यद्यपि अपने पक्ष को पुष्ट करने के लिये एक जन-प्रवाद-मूलक झूठी कथा की बल्ली का सहारा भी लगाया है—गोकि उन्होंने किससे यह कथा सुनी यह वह सर्वसाधारण में प्रगट न कर सके—पर तो भी हमारी नीति की कल्पना के विषय में, या उन साधनों के विषय में जिनके प्रयोग से यह नीति कार्य में परिणत की गई है एक भी शब्द प्रशंसा रूप में उस भाषण में नहीं कहा गया है। इस कारण, क्या मेरा इस कमी को दिखा कर यह दावा करना कि उनकी स्पीच में अधिक सार नहीं था अनुचित होगा। उन्होंने आदि से लेकर अन्त तक हमारी नीति को सरापा है। इस नीति ने जो कुछ किया है और जिस तरह से वह सब किया गया है उसके लिये कोसा है। उन्होंने इसलिये भ

सरापा कि हमने करने के पहिले उनकी सलाह नहीं ली, ग़ज़ब रे ग़ज़ब ! उन्होंने इसलिये कोसा है कि हमारी नीति ने किसी बात का नाश कर दिया जिसे उन्होंने किया था। उन्होंने इसलिये सरापा है कि इस नीति की घोषणा स्वयं सम्राट ने देहली में जमा हुई अपनी प्रजा के सामने की। मैं फिर भी कहता हूं कि इस तरह के सरापने को एक राजनीतिज्ञ की गम्भीर व महत्वपूर्ण आलोचना का मान नहीं दिया जा सकता। यह तो एक ऐसे आदमी की क्रोध में की हुई दोषोद्भावनायें हैं जो कि मुख्यतः अपने ही व्यक्तित्व को देखता है ॥

१९०५ की कथा

क्या आप चाहते हैं कि मैं लार्ड कर्ज़न की आलोचना का कुछ अधिक विस्तार में विचार करूँ ? उन्हें श्रीमान् सम्राट के घोषणा करने में आपत्ति है; क्योंकि सम्राट से घोषणा की हुई नीति बदली नहीं जा सकती—वह अटल है। सुनिये ! शिक्षित भारतवासी सम्राट की, की हुई घोषणा में "मैं अपने मंत्रियों के परामर्श के अनुसार यह परिवर्तन करता हूं" इन शब्दों को पढ़ कर अच्छी तरह से समझते हैं कि इनका क्या अर्थ है और वे यह भी जानते हैं कि "Constitutional Monarch लोकमत-नियन्त्रित सम्राट" का क्या तात्पर्य है, इसलिये इस नीति के प्रवर्तन का दोष अगर उसमें कोई दोष है और यश अगर उसमें कोई यश है, सम्राट के परामर्श-दाताओं को ही मिलना चाहिये। लॉर्ड कर्ज़न की शिकायत है कि सम्राट ने अपने श्रीमुख से जो कुछ कहा वह अमिट होगया। मैं भी आशा करता हूँ कि यह ऐसाही हो, लेकिन अगर यह घोषणा वाइसराय ने की होती तो भी लार्ड कर्ज़न कहते कि यह अमिट है। इसमें सन्देह नहीं कि जो कुछ घोषणा वाइसराय सम्राट के नाम पर करता है वह वैसी ही

है, जैसे सम्राट की की हुई घोषणा। बात तो यह है कि जैसा प्रधान मंत्री ने कहा है कि "जो कुछ लार्ड कर्ज़न स्वयं कर सकते हैं वह उनकी राय में सम्राट को न करना चाहिये था।" (हंसी के साथ सुनो! सुनो!) इसके बाद उनका प्रश्न यह है कि पार्लामेन्ट की सम्मति इस विषय में क्यों नहीं ली गई? यह ज़रा आश्चर्य की बात है कि वह इस विषय में हमें दोष देते हैं, जब उनकी आपत्ति यह है कि हमने उनकी, जैसा कि वह कहते हैं, नीति को बदल दिया है। इसके अतिरिक्त लार्ड कर्ज़न का किया हुआ बंग-भंग पार्लामेन्ट में उस विषय पर वादाविवाद होने के पहिले ही पूरा हो चुका था। मि० हर्बर्ट-रौबर्ट ने मि० ब्रौडरिक से जुलाई ५, १९०५ को एक प्रश्न पूछा था और उन्हें उत्तर मिला था कि "इस विषय का भारत-सरकार का प्रस्ताव मुझे १८ फरवरी को प्राप्त हुआ था और मैंने उन्हें सूचना भी दे दी है कि" सकाउन्सिल भारत-मंत्री भारत-सरकार के प्रस्ताव को स्वीकार करते हैं", लेकिन वह प्रस्ताव क्या थे यह प्रगट नहीं किया गया। इस सम्बन्ध में मि० रौबर्ट ने पार्लामेन्ट में एक प्रस्ताव पेश किया। पर मि० ब्रौडरिक के यह वचन देने पर कि वह इस विषय के काग़ज़-पत्र पेश करेंगे, मि० रौबर्ट ने अपना प्रस्ताव वापस ले लिया।

इसके बाद छुट्टी आ गई। इस छुट्टी के समय में ही नवीन प्रान्त सङ्गठित किये जाने की घोषणा प्रचारित कर दी गई। और जब मि० रौबर्ट ने इस अनुचित व्यवहार का प्रतिवाद किया तो उन्हें मि० ब्रौडरिक का पत्र मिला जिससे मैं यहां पर एक अवतरण देता हूं। "आपको याद होगा कि जिस समय कामन्स सभा में वादाविवाद हुआ था उससे पहिले ही वाइसराय ने अपनी स्कीम पेश की थी और उसकी

मंज़ूरी भी होम गवर्नमेन्ट दे चुकी थी। अब भारत सरकार का वह प्रस्ताव जिसमें वह स्कीम है छप चुका है और पार्लामेन्ट में पेश भी कर दिया गया है।" देखिये ! लार्ड कर्ज़न का कहना है कि उनके किये हुए बंग-भंग के समय गवर्नमेन्ट का निश्चय उस समय प्रगट किया गया था जब कि ज्ञातव्य विषयों से पूर्ण एक ब्लू-बुक महीनों तक पार्लामेन्टके सामने रह चुका था। लेकिन सत्य बात क्या है ? भारत-मंत्री व भारत-सरकार में पत्र व्यवहार हो चुकने पर गवर्नमेन्ट का निश्चय भारत-सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा १८ जुलाई १६०५ को प्रगट किया गया था। यही प्रस्ताव एक ह्वाइट पेपर के रूप में पार्लामेन्ट के सामने ७ अगस्त को रक्खा गया था और इस विषय के बाकी कागज़-पत्र एक ब्लू-बुक के रूप में १२ अक्टूबर को पार्लामेन्ट में पेश किये गये थे—यह निश्चय प्रगट किये जाने के तीन महीने बाद हुआ था उससे महिनों पहिले नहीं।

वास्तविक उत्तरदायित्व

सच बात तो यह है कि कामन्स सभा के सामने इस नीति का उत्तरदाता भारत-मंत्री है। यदि पार्लामेन्ट चाहे तो वह भारत-मंत्री की या मंत्रिमंडल की उसी स्वतंत्रता से भर्त्सना कर सकती है जैसा कि वह उस अवस्था में कर सकती जब यह घोषणा वाइसराय के द्वारा की गई होती। कामन्स सभा ने अबतक कभी साधरण प्रभुत्व रखने के अतिरिक्त भारत के शासन में अधिक हस्तक्षेप की इच्छा प्रगट नहीं की है। इस लिये बंग-भंग की घोषणा व अन्य इसी प्रकार के इन्तज़ामी फेरफार एकाएक व इसी तरह की घोषणायें निकालकर किये जाते हैं। इसका कारण यह है कि इस प्रकार के परिवर्तनों में

अन्योन्य-विरोधी स्वार्थों और दावों का उदय होता है, जिन्हें न्याय के तुले में चढ़ाना और उनकी गुरुता के अनुसार यथा स्थान बिठाना साधारणतः एक कठिन कार्य होता है। ऐसी दशा में इन विषयों पर कामन्स सभा में वादाविवाद का अवसर देने से यह परिवर्तन करना यदि असम्भव नहीं तो कठिन तो अवश्य हो जायगा। यही कारण है कि ब्रिटिश व भारतीय राजतन्त्र में सम्राट की घोषणा द्वारा ही इस प्रकार के परिवर्तन करने का नियम है।

बंगभंग क्यों रद्द किया गया

इसके बाद लार्ड कर्ज़न ने कहा है कि हमारी नीति ने उनकी नीति को रद्द कर दिया है। मुझे विश्वास है कि लार्ड कर्ज़न मुझे क्षमा करेंगे अगर मैं यह कहूं कि आपकी कभी कोई नीति थी ही नहीं। आप कोरे शासक थे—एक परिश्रमी, उत्साही और कार्य दक्ष शासक थे। थोड़े में यदि यही कहा जाय तो आप एक चौफ़र (Chauffeur) थे, जो अपना समय मैशीन को पोंछने, हर एक ढेबरी व बोल्टू को कसने, और अपनी गाड़ी को चलने योग्य बनाने में बिताता है, पर यह व्यक्ति न तो गाड़ी को चलाता है और न यही जानता है कि यह गाड़ी कहाँ ले जाई जायगी। (सुनो! सुनो!!) आप ने बैठे बैठे घड़ियाँ गिनीं और उस समय की प्रतीक्षा की, जब आपको सुधार करने वाली सरकार की ओर से हुक्म मिला कि बढ़ो। यदि आप यह दावा करते हैं कि बंग-भंग केवल एक इन्तज़ामी काम ही न था, बल्कि वह किसी निश्चित नीति के पूरा करने के विचार से किया गया था तो मैं यह अवश्य कहूंगा कि जितना मैं अब तक समझता था उससे

कहीं बड़ी ग़लती इस कार्य को करके की गई है। क्योंकि एक नवीन मुसलमानी प्रान्त का बनाना निश्चित ब्रिटिश नीति को छोड़ कर जाना है, जिसका परिणाम यह होता कि हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के शत्रु बना दिये गये होते। मैंने इसे सदैव एक अदृश्य परिणाम ही माना है न कि यह कि जानबूझ कर इस कार्य की सिद्धि के लिये लार्ड कर्ज़न की यह ग़लती की गई थी। सदा हमें इस बात का अभिमान रहा है कि अंगरेज़ी राज्य ने भारत में जो भिन्न भिन्न धर्म, पन्थ व क़ौमें पाईं उनमें उसने किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया। लार्ड कर्ज़न ने स्वयं बंग-भंग के प्रश्न को एक शासन के सुभीते का प्रश्न समझा है, यह उनकी स्पीच से ही प्रगट होता है। अपनी स्पीच में उन्होंने कहा है कि पुराने बंगाल प्रान्त के बहुत विस्तृत होने के कारण यह आवश्यक हो गया था कि कहीं से लकीर खींच कर उसके दो भाग कर दिये जायँ। इसके बाद उन्होंने कहा है कि "यह रेखा कहाँ से खींची जाय यह निश्चय करना वाइसराय का काम नहीं था"। देखिये! एक बड़े भारी नवीन प्रान्त का बनाया जाना, दस लाख मनुष्यों के भाग्य का फैसला करना—जिसमें लोगों के धार्मिक व क़ौमी विचारों पर आघात होने का डर था—वाइसराय के विचार करने का काम नहीं था। जहाँ एक प्रान्त था वहाँ दो छोटे छोटे प्रान्त बनाने की आवश्यकता देखने के अतिरिक्त और किसी बात का विचार उन्होंने नहीं किया और विभाजक रेखा का किन किन स्थानों में होकर जाना ठीक होगा, इसका विचार करना उन्होंने अपना कर्तव्य नहीं समझा। १२ दिसम्बर को जिन परिवर्तनों की घोषणा की गई थी उसमें लार्ड कर्ज़न की नीति रद्द नहीं की गई,

बल्कि उनमें हमने भाग करने की आवश्यकता स्वीकार करके केवल इतना अन्तर कर दिया है कि जहाँ उन्होंने दो भाग किये थे हमने तीन कर दिये हैं।

नवीन नीति

अगर अन्तर है तो इस बात में है कि हमने, भविष्य में हमारी क्या नीति होगी, इस बात का विचार करके यह उद्योग किया है कि बङ्गाल में इस समय जो परिवर्तन किये जाँय वह इस नीति के अनुकूल हों। हमारी इस नीति ने अभी पहिली ही बार भारत-सरकार के खरीते में प्रकाश पाया है जो कि पार्लामेन्टरी पेपर के रूप में प्रकाशित हो चुका है। इस खरीते में वह लक्ष्य प्रगट किया गया है जिसके प्राप्त करने के लिये–अभी इसी समय नहीं, जल्दी से नहीं, बल्कि धीरे धीरे–उद्योग करने का हमारा विचार है। आशा है आप मुझे इस खरीते से वह वाक्य उद्धृत करने की आज्ञा दे देंगे जिसमें हमारी नीति का सार है—भारत सम्बन्धी "इस प्रश्न के हल करने का एक ही उपाय मालूम होता है, वह यह है कि धीरे धीरे प्रत्येक प्रान्त को पूर्ण स्वराज्य दे दिया जाय; यहाँ तक कि कभी वह समय भी आजायगा कि हिन्दुस्तान ऐसे प्रान्तों का समुदाय हो जायगा जो प्रादेशिक कार्यों में पूर्णरूप से स्वतन्त्र होंगे। भारत-सरकार का इनपर प्रभुत्व होगा, पर वह कुप्रबन्ध होने पर ही इनके कार्यों में हस्तक्षेप करेगी, साधारणतः इसका कार्य साम्राजिक कार्यों को करना ही होगा"। हम अपनी नीति निश्चय किये बिना अनन्त काल तक इधर उधर बहते नहीं रह सकते। अब एक नवीन सृष्टि, एक नवीन विचारों का सम्प्रदाय—जिसकी वृद्धि हमारी तालीम व युरोपीय शिक्षा के कारण हुई है–उठ खड़ा हुआ है जो यह पूछने लगा है "हमारे

लिये क्या करने जा रहे हो ?" गरम पक्ष, जो इस सम्प्रदाय का बाहरी किनारा है, यह निश्चय कर चुका है कि उन्हें क्या चाहिये। इस पक्ष के एक नेता मि० विपिनचन्द्रपाल ने जिस प्रकार का स्वराज्य उन्हें चाहिये उसका पूर्ण, सविस्तर, स्पष्ट, और युक्ति-संगत चिट्ठा बना कर प्रकाशित भी कर दिया है। नर्म पक्ष के भी लोग यह जानना चाहते हैं कि भविष्य में हमारी नीति क्या होगी। हमने इस प्रश्न का उत्तर आज तक नहीं दिया था और टाल बताते इतना समय हो गया था कि अब हम अधिक नहीं टाल सकते थे। आख़िर इतने दिनों बाद एक वाइसराय ने यह बताने का साहस किया कि भारत में ब्रिटिश शासन की नीति भविष्य में क्या होगी और किन उपायों से हम अपने उस लक्ष्य तक पहुँचना चाहते हैं।

राजधानी का स्थानान्तरित करना

राजधानी कलकत्ते से देहली उठ जाने में जहाँ तक मैं समझता हूँ लार्ड कर्ज़न को इसलिये आपत्ति है कि लार्ड विलिङ्गटन कह गये हैं कि देहली अच्छा सैनिक केन्द्र नहीं बन सकता। पर लार्ड विलिङ्गटन हमारे काल के श्रेष्ठ वीरों में से नहीं हैं। उन्हें एक ऐसे समय का सामयिक अनुभव है जब कि भारत में रेलें नहीं थीं, और तोपखाने में भी ऐसी उन्नति नहीं हुई थी। वाटरलू की लड़ाई वर्तमान समय के प्रश्नों के लिये बहुत पुराना ज़माना है। हमने सब बातों का विचार करके अपने सम्राट की गवर्नमेन्ट को इतिहास प्रसिद्ध भारत की राजधानी में प्रतिष्ठित किया है। लार्ड कर्ज़न कहते हैं कि कलकत्ता १५० वर्ष से भारत की राजधानी है, पर देहली—जिसमें सम्राट का दरबार हुआ, और लार्ड

कर्ज़न का भी दरबार हुआ—पुश्त दरपुश्त से भारत की राजधानी चली आरही है। इतिहास के अँधेरे भाग से आरम्भ करके बादशाहों के एक ख़ानदान के बाद दूसरे ख़ानदान ने देहली ही को राजधानी का मान दिया है और भारत में एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक सब लोग इसका मान करते हैं। मैं कह सकता हूँ कि हमने ऐसा स्थान पसन्द किया है, जो कि सब प्रकार से भारत का केन्द्र ही नहीं है, जो कि शासन दण्ड चलाने के लिये एक उत्तम स्थान ही नहीं है—बल्कि एक ऐसा स्थान है जिसका राजधानी होना भारत में एक छोर से दूसरे छोर तक सब प्रकार के लोग पसन्द करेंगे। लार्ड कर्ज़न ने कहा है कि देहली में राजधानी रखने से गवर्नमेन्ट को सर्वसाधारण के मत का पता न चलेगा। मेरा कहना यह है कि गवर्नमेन्ट कलकत्ता के मत से अवश्य दूर रहेगी पर वह भारत के लोकमत का भारत के केन्द्र स्थान से—जो कि भारत के एक कोने की नीची ज़मीन नहीं है, बल्कि भारत के मध्य में एक उच्च स्थान है—अच्छी तरह परिशीलन कर सकेगी। अब वह सारे जंगल को देख सकेगी, क्योंकि देहली में उसके दृष्टि पथ को रोक कर विकृत करने के लिये वहाँ कोई (कलकत्ता के लोकमत के समान) दीर्घकाय व ऊँचा वृक्ष न होगा।

आयरलैन्ड की माँग

आप लोगों ने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की, जो आपने मेरे समान भीषण मनुष्य के भाषण को सुनने की कृपा दिखाई—एक ऐसा मनुष्य जो अपने विचार तुरंग पर चढ़ कर उसे बेपरवाही से बुरी तरह हाकता है और जिसके भाषण से

लोगों के उकता उठने का डर सदैव रहता है। पर मैं अपना कर्तव्य पालन न करने का दोषी हूँगा, मैं अपनी तनख्वाह पाने का हकदार न रह जाऊँगा—जो कि मुझे भारत के कर दाताओं से मिलती है—अगर मैं इस तरह के सार्वजनिक अवसरों पर उस नीति का समर्थन न करूँ जिसको मैं उदार-पक्ष की परम्परागत श्रेष्ठ साम्राज्य सङ्गठन नीति के अनुकूल समझता हूं। पर इस नीति में लार्ड कर्ज़न व बोनर ला के भाषणों द्वारा अनुदार-पक्ष ने किसी प्रकार का भाग लेना अस्वीकार किया है। अभी हाल में उन्हें एक अवसर और मिलेगा। हम इन सिद्धान्तों का प्रयोग राष्ट्र की सम्मति से आयरलैन्ड के साथ करने वाले हैं। यहाँ भी हम किसी की नीति को रद्द करने का विचार नहीं रखते पर हम अङ्गरेज़ व आइरिश लोगों की चिर मैत्री स्थापन करने का विचार कर रहे हैं। हम आयरलैन्ड को स्वराज्य देकर वहाँ की शासन पद्धति को उच्च बनाने का विचार कर रहे हैं; और उस बोझ को हटा कर, जो उसकी कानून बनाने की मैशिनरी में बहुत रुकावट पैदा करता है, इङ्गलैन्ड की गवर्नमेन्ट की दशा को भी सुधारना चाहते हैं। अनुदार-पक्ष के उदार नीति को कुछ अंशों में मान लेने से मि० ग्लैड्स्टन के स्कीम का भूमि खरीदने वाला कार्य सम्पन्न हो चुका है। आयरलैन्ड उस व्यवहार की प्रतीक्षा कर रहा है जो आपने साम्राज्य के दूसरे भागों के साथ किया है। ब्रिटिश साम्राज्य का भक्त बनने के लिये दूसरे भागों के समान ही वह भी 'कारण' चाहता है। आयरलैन्ड के कारण हमारे घर के कामों में बाधा पड़ती है और उसका असन्तोष हमारी राज्य-श्री के लिये धब्बा हो रहा है। आयरलैन्ड की आकांक्षा यही पाने

की है जो कलोनीज़ को मिल चुका है यह देख कर वह सब उसकी आकांक्षा के साथ सहानुभूति रखती है!

आयरलैन्ड आपके द्वार पर खड़ा यह कह रहा है कि जिस प्रकार कनाडा की माँगें पूरी की गईं, दक्षिण अफ्रिका की माँगें पूरी की गईं, बंगाल की माँगें पूरी की गईं, उसी प्रकार उसकी भी माँगें साम्राज्य सरकार पूरी करे। हम—जिस गवर्नमेन्ट का मैं प्रतिनिधि हूं—उसकी माँगें पूरी करने को तय्यार हैं। साम्राज्य सम्बन्धी महान कार्य जो कुछ हमने १८३६ से लेकर आज तक किये हैं उसका लेखा आपके विचार के लिये प्रस्तुत है; उसका जिस प्रकार अनुदार-पक्ष ने विरोध किया है, जिस प्रकार आगे बढ़ने से मुँह मोड़ा है, उसका भी लेखा प्रस्तुत है उसे भी आपको विचारना चाहिये। अगर अनुदार-पक्ष आइरिश लोगों की माँगों का विरोध करने के लिये आगे बढ़ेगा, जैसा कि वह इस समय धमका रहा है, तो वह अपने मस्तक में इस बात का टीका ले लेगा कि वह साम्राज्य सम्बन्धी कार्यों के करने में अयोग्य है और हमें एक बार फिर यह मान प्राप्त होगा कि यही एक पार्टी ऐसी है जो योग्य है और साम्राज्य के लक्ष्य को पूरा करने के लिये प्रस्तुत भी है।



भारत की दशा

विशप-आकलैण्ड में व्याख्यान

(२ नवम्बर, १६१०)

बिशप-आकलैंड में उदार दल की २ नवम्बर, १६१० को जो सभा हुई थी उसमें मि० मॉन्टेगू ने यह भाषण किया था। इस सभा में आकलैन्ड डिविज़न लिबरल एसोशियेशन के चेयरमैन मि० जेम्स राम्सडेन ने सभापति का आसन ग्रहण किया था।

भाषण करते हुए मि० मॉन्टेगू ने कहा:—



पिछले कुछ वर्षों की अपूर्व परिस्थिति यह है कि इस देश के अङ्गरेजों में वह जागृति उत्पन्न हुई है जिसके कारण वह भारतीय प्रश्नों की ओर अधिक ध्यान देने लगे हैं। साल बसाल समाचार पत्रों, व्याख्यानदाताओं व लेखकों का ध्यान अधिकाधिक भारत की ओर झुकता जा रहा है; और सब तरफ़ यह बात लोगों के ध्यान में आती जा रही है कि हमारे "ब्रिटिश मुकुट का सब से अधिक प्रभावान मणि" साम्राज्य का आभूषण मात्र ही नहीं बल्कि यह एक गुरुतर न्यास है

जिसके कारण हमारे ऊपर कठिन और दिन प्रतिदिन बढ़ने वाली जिम्मेदारियों का भार है। भारत व इङ्गलैण्ड के इस सम्बन्ध को हम चाहे जितना अधिक महत्व दें थोड़ा होगा। हमने एक ऐसे काम में हाँथ डाला है जिसकी महत्ता अकथनीय है, और हमें जिन प्रश्नों को हल करना पड़ेगा उनकी व्यापकता असीम है। इस समय इङ्गलैन्ड की जनता की दृष्टि में भारत का महत्व प्राप्त करना बहुत ही माङ्गलिक है। इसमें सन्देह नहीं कि हमारे अधिक ध्यान देने का कारण कुछ न कुछ अंशों में पूर्व की नवीन जागृति है जो, हमारे ध्यान को बलपूर्वक अपनी ओर खींच रही है, और कुछ अंशों में वह प्रश्न भी हैं जो इस समय ज़ोर देकर ऊपर उठ रहे हैं और जिन्हें एक पीढ़ी पहिले के लोगों ने भविष्य पर छोड़ दिया था। इसके अतिरिक्त कुछ अंशों में राजनैतिक हत्याकाण्डों ने भी इसमें सहायता की है क्योंकि जिस समय यह हत्याकाण्ड होते थे अभिनय में होने वाले दृश्यों के समान जनता के ध्यान को आकृष्ट कर लेते थे और बाद को भी इनमें एक प्रकार का झूठा महत्व रहता आया है। पर अगर मुझसे यह प्रश्न किया जाय कि सब से अधिक किस बात ने भारत के प्रश्नों को इङ्गलैन्ड में इतना अधिक महत्व प्रदान किया तो मैं यही उत्तर दूँगा कि वर्तमान साम्राज्य सरकार ने। क्योंकि गवर्नमेन्ट ने ही इस बात को पूर्ण रूप से समझा है कि भारत का साम्राज्य में कैसा उच्च स्थान होना चाहिये और भारत के प्रश्नों का क्या महत्व है, क्योंकि इसने ही इङ्गलैन्ड के श्रेष्ठ पुरुषों को भारत की सेवा में लगा रक्खा है और इन्डिया-आफ़िस का प्रधान एक ऐसे सज्जन को बनाया है जो कि उदार दल का एक विचित्र और लोकप्रसिद्ध पुरुष है।

लार्ड मॉर्ले का शासन

मैं कल एक मासिक-पत्र पढ़ रहा था, उसमें एक लेख था जिसका स्मरण मुझे इस समय ही आया है। यह लेख लार्ड मॉर्ले के शासन की एक खास स्थिति के दोष दिखाने के विचार से ही लिखा गया है। पर तो भी इस लेख में इस बात पर ध्यान दिलाया गया है कि वर्तमान गवर्नमेन्ट व लार्ड मॉर्ले के भारतीय प्रश्नों के हल करने में चाहे जो कमी हो पर दोनों ने मिल कर भारत का एक बड़ा भारी उपकार किया है। वह उपकार यह है कि इन्होंने भारतमंत्री के पद पर कोताअक्ल के लोगों को भरने की जो चाल सी थी उसे सदा के लिये नष्ट कर दिया। मैं ख्याल करता हूं यह सत्य भी है। इतना तो कम से कम, मैं समझता हूँ, ज़रूर सत्य है कि उदार-पक्ष की गवर्नमेन्ट इस नीति का सदैव पालन करेगी। इससे ज़्यादा भविष्य कहने की मैं धृष्टता नहीं कर सकता। पर भारत के सम्बन्ध में लार्ड मॉर्ले की यही एक सेवा नहीं है कि उन्होंने अपने नाम के प्रकाश से भारत-मंत्री के पद को प्रभायुक्त किया है। जो कुछ उन्होंने भारत के लिये किया है और जो कुछ वह इस समय कर रहे हैं वह किसीसे छिपा नहीं है इससे मैं इस विषय को बढ़ाना नहीं चाहता। इनका समय बड़े कष्ट में बीता है। पुराने विचार के लोगों ने इनकी खूब धूल उड़ाई है। हमारे ही पक्ष के कुछ ऐसे लोगों ने, जिनमें उत्साह का अतिरेक हो गया है, अच्छी नियत से और पुराने विचार वालों से भिन्न दृष्टि से, इनकी झनाटेदार समालोचना की है। इन लोगों के ध्यान में यह नहीं आया कि उनके मूल उद्देश्य की सबसे अच्छी पूर्ति लार्ड मॉर्ले की नीति में ही होगी। वह

लोग यह भूल गये हैं कि इस देश के विषय में यह सही कहा गया है कि—मैं यहाँ पर उस किताब से एक अवतरण दूँगा जो अभी भारत के विषय में निकली है और जिसके बाबत स्थानान्तर में मैं और भी कहूंगा—"ज़ोर देकर आगे को धढ़ाया हुआ पेन्डुलम थोड़े ही समय में वापस हट कर फिर अपने स्थान में आ जायगा।" पर लार्ड मॉर्ले ने कभी नहीं खाई, वह धीरता के साथ अपने पथ पर चल रहे हैं; और इतिहास, मैं ख्याल करता हूं, स्पष्ट शब्दों में यह दिखायेगा कि इनको भारत की कथा में कौन सा स्थान मिलना चाहिये।

धन-वैभव और दरिद्रता

मि० मॉन्टेगू ने अपने भाषण में आगे चल कर कहा कि यह बात स्पष्ट ही है कि इङ्गलैन्ड के शासन से भारत में धन-वैभव की अच्छी वृद्धि हुई है। यद्यपि यह बात मुझसे छिपी नहीं है कि भारत में, दुर्दैव से, ऐसे लोगों की संख्या अधिक है जो अपना जीवन दरिद्रता में काट रहे हैं पर मेरा यह कहना है कि अँगरेज़ी शासन के प्रभाव से दरिद्रता कम हो रही है। तिज़ारती लेखा की जाँच करते हुए उन्होंने कहा कि सन् १८५८ में—इससे पहिले का लेखा नहीं है—समुद्र पथ से ६६२५००००) रु० की तिज़ारत हुई थी। पिछले साल इसी तिज़ारत का मूल्य ३०४५००००००) रु० था। इस प्रकार पिछले ५० वर्षों में ५०० प्रति सैकड़ा से अधिक की उन्नति हुई है। और लीजिये, गवर्नमेन्ट की आय, जो पिछले वर्ष १११३७५००००) रु० थी, पिछले ५० वर्षों में दुगुनी से भी अधिक हो गई है, यद्यपि राज्य कर के प्राप्त

करने के मार्ग वही पुराने ही हैं। भूमि कर, जिससे खेती में क्या उन्नति हुई इसका मोटे तौर से पता लग जाता है, अगर रुपयों में हिसाब लगाया जाय तो साठ फी सैकड़ा बढ़ गया है। इसके अतिरिक्त, भूमि कर की बढ़ती के साथ खेती की उपज की कीमतें भी बहुत बढ़ गई है और यह भूमि कर किसानों पर बेजा बोझ डाल कर प्राप्त नहीं किया जाता।

इङ्गलैन्ड ने भारत को आन्तरिक उन्नति करने के लिये बहुत सा धन उधार दे रक्खा है। भारत के बनिज-व्यापार सम्बन्धी कार्यों में अंगरेज़ों ने जो धन लगा रक्खा है वह मोटे हिसाब से भी ३७५००००००) रुपये से कम न होगा। लेकिन अपने निज के प्रबन्ध से जो रुपया लोगों ने लगा रक्खा है उसे छोड़ देने पर भी, क्योंकि इसका ठीक ठीक पता नहीं लग सकता, इङ्गलैन्ड ने भारत सरकार को १८५००००००) रुपया ऐसे कामों के लिये दे रक्खा है जो दूसरी भाषा में "सार्वजनिक कामों के लिये" लिक्खे जाते हैं—यानी नहर व रेल बनाने व उन्नति करने के लिये। सब मिला कर "साधारण कर्ज़"—वह कर्ज़ जो हानिकारक नहीं रहा और जो हमारे देश के "नेशनल डेट" के समान है—भारत पर केवल ६३३७५००००) रुपये का है जो कि हमारे १०५०००००००) रुपये के कर्ज़ के सामने, जिसका बोझ हम पर है, कुछ भी नहीं है।

भारत के धन की खींच

एक खास विचार के लोगों का सम्प्रदाय है,—यद्यपि हमारे भाग्य से इस सम्प्रदाय में अधिक लोग नहीं हैं—जो कि तोड़ मरोड़ कर इस तरह से तर्क करता है कि इङ्गलैन्ड

के इस ऋण को भारत के प्रति अपराध करना बताता है और भारत साल में जो इङ्गलैन्ड को देता है उसे यह इङ्गलैण्ड द्वारा भारत के धन की "खींच" का नाम देता है। यह बात ज़रूर है कि भारत को ऋण देकर हमें उसका अभिमान करना असङ्गत होगा, पर उस थोड़े से ब्याज को, जिस पर भारत इङ्गलैन्ड से धन उधार लेता है और जिसे वह लाभदायक कामों में खर्च करता है, "एक रुपये वाली नेशन का असहाय लोगों का खून चूसना" कहना भी अत्यन्त हास्यजनक है।

उन लोगों की दृष्टि में, जो इस "धन की खींच" का होना स्वीकार करते हैं केवल यह ब्याज ही "धन की खींच" नहीं है बल्कि वह सब रुपया जो भारत सरकार प्रतिवर्ष यहाँ को उस ख़र्च के लिये भेजती है जो "होम चार्जेज़ या विलायती कर" के नाम से प्रसिद्ध हैं विलायत द्वारा "धन की खींच" ही है। पिछले वर्ष यह ख़र्च २८५००००००) रुपये से ज़्यादा था पर इसमें से आधे से अधिक रुपया ऋण पर प्राप्त हुआ ब्याज था। जो कुछ बाकी रहा उसमें सब से बड़ी रकम ८२५०००००) रुपये—अँगरेज़ अफ़सरों की छुट्टी की तनख्वाह व पेन्शन है, १५००००००) रुपया फ़ौजी व जहाज़ी ख़र्च है; और १५००००००) रुपया ऐसा सामान—जैसे रेल-गाड़ी व इंजिन इत्यादि—जो भारत में नहीं बन सकता है—खरीदने में ख़र्च हुआ है। फ़ौजी व जहाज़ी ख़र्च में जो धन व्यय हुआ है वह भारत की ओर से वार आफ़िस व एडमिरैल्टी की उस सेवा के उपलक्ष में दिया गया है जो उन्होंने की है। अथच यह भारत को रक्षित रखने का मूल्य है। सामान के यहाँ खरीदे जाने में भारत का लाभ स्पष्ट व सीधा ही है। अगर ब्रिटिश सरकार का फ्रान्स से एक खास तरह के

गुब्बारे का खरीदना फ्रान्स की ओर से अँगरेजी धन की खींच न कहा जायगा तो भारत का इस देश से सामान खरीदना भी "धन की खींच" नहीं है। छुट्टी की तनख्वाह व पेन्शन देने में यद्यपि भारत का लाभ प्रत्यक्ष नहीं है पर तो भी सच्चा लाभ है। जब तक भारत का सम्बन्ध इङ्गलैन्ड से एकदम तोड़ न दिया जाय यह कदापि सम्भव नहीं है कि योरोपियन अफसरों की एक जमात शासन में भाग न ले। फिर भी यह जमात बहुत ही छोटी है। इन्डियन सिविल सर्विस में उन अँगरेजों की संख्या जो शासन कार्य से युक्त रहते हैं कभी ६५५ से अधिक नहीं हुई—इस हिसाब से २३०००० जन-संख्या के लिये एक अँगरेज है।

भारत की नैतिक परिस्थिति के सम्बन्ध में मि० मॉन्टेगू ने कहा कि मैंने जो दूसरे समयों में कहा है उसे ही दोहरा सकता हूं। यद्यपि किसी किसी समय हमने अपने तरीकों में कोताअक्ली दिखलाई होगी और हमारा काम करने का ढंग नवसिखियों का सा रहा होगा, पर जिस महान अनुभव करने के कार्य में हम लगे थे उसमें इस प्रकार की ग़लतियाँ करने से हम बच नहीं सकते थे—कार्य करने वालों के विचार चाहे जितने उच्च व पक्षपात हीन ही क्यों न रहे हों। पर अवस्था आशाजनक है। हमने पूर्व के खेतों में पश्चिम के विचार बीजों को बोया था, अब हमारी फस्ल तैयार होने को ही है। हमारा इस बात पर विश्वास करने की ओर अधिक झुकाव है कि भारतीय शासन का प्रश्न अशान्ति—जिसकी छूत भारत के कुछ लोगों में लग गई है—के दूर करने के प्रश्न के साथ लिपटा हुआ है, पर भारत में सौ मनुष्यों में एक ही ऐसा होगा जो यह जानता हो कि देश में अशान्ति है।

इससे भी कम दृष्टि-भ्रम हमें यह देख कर होना चाहिये कि कभी कभी राजनैतिक अपराध हो जाते हैं। जन-संख्या को देखते हुए इन राजनैतिक हत्याकाण्डों व अपराधों का होना न होने के बराबर है और जागृति की सच्ची लहर से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

टाइम्स पत्र की लेखमाला

इस समय मैं अशान्ति के विषय में अधिक कहना नहीं चाहता। इसका कारण यह है कि मेरी बजट स्पीच के बाद टाइम्स ने इस सम्बन्ध में एक लेखमाला निकाली है। इस लेखमाला के लेखक, यद्यपि यह प्रगट नहीं किया गया है, वेलेन्टाइन शिरोल हैं। यह टाइम्स पत्र के वैदेशिक सम्पादक व पूर्वीय प्रश्नों पर अच्छे लेख लिखने वालों में हैं। इस लेख-माला में, जो ७५ कालम में समाप्त हुई है, भारतीय अशान्ति का प्रत्येक दृष्टि से अलग अलग विचार किया गया है। मुझे यह जान कर बड़ी प्रसन्नता है कि अब यह लेख पुस्तकाकार प्रकाशित किये जायँगे। ऐसा होने से लोगों को इन्हें पढ़ने का अधिक सुभीता हो जायगा। इन लेखों में जो कुछ कहा गया है उससे मैं पूर्णतः सहमत नहीं हूँ। लेखक ने कई स्थानों में मेरे कथन का खण्डन किया है। पर तोभी मैं यह स्वीकार करता हूँ कि यह लेख बड़े खोज के बाद लिखे गये हैं, इनकी भाषा भी तीव्र नहीं है, इनमें जो दलीलें दी गई हैं वह भी सारगर्भित हैं, इनकी वर्णन-शैली भी विषय को स्पष्ट करने वाली है और इनमें विचारणीय विषयों का अच्छी तरह से विचार करके सिद्धान्त स्थिर किये गये हैं। इन लेखों की समालोचना करके मैं अनुदारता व धृष्टता का दोषी नहीं

बनना चाहता। आलोचना करने से मैं अनुदारता का दोषी हूँगा; क्योंकि हर एक व्यक्ति जो भारतीय प्रश्नों का अनुरागी है वह मि० शिरोल का ऋणी है। इन्होंने इस उलझे हुए आन्दोलन के उत्पन्न होने के क्या कारण थे, इसकी उन्नति किस प्रकार हुई और नरम व गरम यह दो दल किस प्रकार से उत्पन्न हुए इत्यादि प्रश्नों पर अच्छा प्रकाश डाला है; और धृष्टता का दोषी मैं इसलिये हूँगा कि इन्होंने बड़े परिश्रम से घटना स्थल में ही परिस्थिति से सम्बन्ध रखने वाली हर एक बात का विचार किया है पर मैंने यह नहीं किया है। पर मि० शिरोल से मेरा यह नम्र निवेदन है कि उन्होंने एक परमावश्यक बात पर उचित ध्यान नहीं दिया है। वह परमावश्यक बात यह है कि भारत की इस जागृति में उचित स्वाभाविक आकांक्षाओं और हानिकर राजनैतिक आन्दोलन—जिसका परिचय हमें राजनैतिक अपराधों में होता है—इन दोनों का समावेश है और मि० शिरोल ने इन दोनों को अलग करने के लिये कोई रेखा नहीं खींची है।

दमन और अनुरंजन

इस रेखा को खींचना बड़ा कठिन है। कठिन ही नहीं, कभी कभी तो यह असम्भव ही जान पड़ता है। पर यदि हम हिन्दुस्तान के प्रति अपना कर्तव्य करना चाहते हैं तो इस रेखा का खींचा जाना परमावश्यक है, चाहे हमें इस कार्य में सन्देह का लाभ ही भारतवासियों को क्यों न देना पड़े। हमें असन्तोष रूपी हानिकारक झाड़ियों को बेपीर होकर काट डालना चाहिये, पर यह ध्यान रखना होगा कि हमारा चाकू इधर उधर फिसलने न पावे। इससे अधिक इस बात पर ध्यान

देना होगा कि अपनी रक्षा के लिये दूषित भाग को काट कर निकालनेमें स्वस्थ भाग को किसी तरह की जान बूझ कर हानि न पहुँचाई जावे। इस असन्तोष के प्रश्न को हल करने के योग्य अगर कोई नीति हो सकती है तो वह नीति ऐसी होगी जिसमें दमन और अनुरंजन दोनों का समावेश होगा—यद्यपि इन दोनों शब्दों में एक प्रकार का विरोधाभास है। मैं इन दोनों शब्दों में एक को भी पसन्द नहीं करता। मैं दमन नीति को इस कारण मान नहीं देता कि इसमें, जब तक यह स्पष्ट न कर दिया जाय कि इसका प्रयोग केवल अपराधियों के साथ ही किया गया है, अनुदार और अंगरेज़ जाति से निन्दित उपायों की गन्ध आती है। इससे भी कम मान मैं अनुरंजन नीति को देता हूं जो कि एक प्रकार से असंगत सी है। इसका कारण यह है कि इस से यह भाव सूचित होता है कि हम राज़ी रखने के विचार से जो कुछ न्याय है उससे भी अधिक करने को तय्यार हैं। यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि दमन और अनुरंजन, अगर इस समय के लिये मैं इन शब्दों को ठीक मान लूँ, ऐसी दो नीतियाँ नहीं हैं जिनका उपयोग जनता के किसी ख़ास भाग के साथ बारी बारी से किया जायगा, पर यह ऐसी दो नीतियाँ हैं जिनका प्रयोग एक ही समय में भिन्न २ लोगों के साथ किया जायगा।

ऐसे पत्र-सम्पादक जिनमें मि० शिरोल की सी न्यायपरता व महानुभावता की कमी है बहुधा यह कह बैठते हैं कि हम लोगों की दिल जमई के लिये थोड़ा सा उनका मन रख देते हैं जिसमें हमें दमन नीति का प्रयोग करने में अपने बचाव का सुभीता रहे। हम भारतीय लोकमत को अनुरंजन नीति से चिकना कर देते हैं जिसमें दमन नीति को हम आसानी से

दौड़ा सकें। दूसरे लोग इसी को "बारूद और मिठाई वाली नीति" कहते हैं। हम इसे चाहे जिस नाम से पुकारें, इसमें सन्देह नहीं कि यह हमारे सम्बन्ध में एक अमूलक दोषोद्भावना है। (सुनो! सुनो!!)

इन्डिया-आफ़िस और सिविल-सर्विस

मि० शिरोल ने इन्डियन सिविल सर्विस के साथ इन्डिया-आफ़िस का जैसा व्यवहार है उसके विषय में बहुत से दोषारोपण किये हैं। इस विषय में नम्रता पूर्वक मैं यह कहना आवश्यक समझता हूँ कि मि० शिरोल ने उस गवर्नमेन्ट के साथ, जिसका मैं भी एक मेम्बर हूं, अन्याय किया है। मि० शिरोल ने लिखा है कि "पिछले कुछ वर्षों में इन्डियन सिविल सर्विस के ध्यान में यह बात जम गई है कि अब उन्हें पहिले की भाँति ह्वाइट-हाल व शिमला से सहायता व उत्साह-प्रदान की आशा न करनी चाहिये"। उन्होंने और भी लिखा है कि "पार्लामेन्ट में सरकारी अफसरों के जो भाषण होते हैं उनकी ध्वनि उत्साह को दमन करने वाली होती है और अधिकतर इन स्पीचों में उन सरकारी नौकरों की रक्षा की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता जिनके हाँथ में अपना बचाव करने का कोई साधन नहीं है—जिन पर अनेक प्रकार के झूठे कलंक लगाये जाते हैं, मिथ्यारोप किये जाते हैं, और जो राजनैतिक हत्यारे के बम व पिस्तौल का शिकार होते हैं। इन स्पीचों में अधिक ध्यान इस ओर दिया जाता है कि पार्लामेन्ट में अपनी पार्टी किसी तरह के संकट में न पड़ने पावे"। यह भयङ्कर दोषारोपण कि गवर्नमेन्ट अपने नौकरों को हत्यारों से रक्षा करना उतना आवश्यक नहीं समझती जितना वह अपनी पार्टी

को संकट में पड़ने से बचाना आवश्यक समझती है एक ऐसा दोषारोपण है कि बिना प्रमाण के कोई भी न करेगा। पर मि० शिरोल ने अपने कथन की पुष्टि में एक भी ऐसी घटना का उल्लेख नहीं किया है। मुझे आशा है कि वे मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं यह कहूँ कि वे ऐसी कोई घटना बता भी नहीं सकते।

यह दावा किया जा रहा है कि भारत में जो अफ़सर हैं वह चाहे जो करें पर उनके कामों की कोई आलोचना न करे। यह एक मानी हुई नीति होनी चाहिये। पर मुझे विश्वास है कि मि० शिरोल इस प्रकार की नीति के पक्षपाती न होंगे। संसार भरके लोग यह मानते हैं कि जहाँ कोई व्यक्ति आलोचना से बाहर रक्खा गया वह तुरन्त अवनति के पथ पर चलने लगता है। तब भारत की परिस्थित में मैं कोई ऐसी बातें नहीं पाता जिनके कारण उस देश में यह सर्वव्यापी नियम लागू न माना जाय। बल्कि भारत में इस नियम का पालन करना और भी आवश्यक है क्योंकि उस देश में अफ़सर लोग अपने कामों के शासित-वर्ग के सामने उत्तरदाता नहीं हैं। ऐसी दशा में उनके कामों की ठीक २ आलोचना होना और भी लाभदायक होगी। भारत-वासियों के सामने अप्रत्यक्ष रूप में वह अपने कामों के उत्तरदाता हैं और इस समय इनका स्थान साम्राज्य सरकार, ब्रिटिश पार्लामेन्ट, तारसमाचार, व समाचार-पत्रों ने ले रक्खा है। इस कारण एक भारतीय अफ़सर को निष्पक्ष आलोचना का आदर करना चाहिये, शङ्काओं का समाधान करना चाहिये और अपने कार्यों को उचित प्रमाणित करके उसे अपनी योग्यता की धाक बाँधनी चाहिये। सिविल सर्विस वाले तो कुछ नहीं कहते पर बाहर के अनभिज्ञ लोग ही स्वार्थ की रक्षा के लिये इस तरह उनकी आलोचना से निवृत्ति चाहते

हैं। पर इसका फल सिविल सर्विस वालों को भोगना पड़ता है। अपने कामों की आलोचना नहीं चाहते इसी कारण ब्रिटिश जनता की एक टुकड़ी एंग्लो-इन्डिन लोगों के विषय में सदैव प्रश्न किया करती है।

इस मण्डली की नर्म से नर्म आलोचना में यह भाव रहता है कि सिविल सर्विस का अफ़सर सहानुभूति शून्य होता है, उद्धत स्वभाव का होता है, सबसे अलग रहता है, संकीर्ण विचारों का होता है और भारत सरकार रूपी जड़ मैशीन का दाँत है। इसके उपरान्त यहाँ तक मामला पहुँच जाता है कि इन लोगों की दृष्टि से वह इतना गिर जाता है कि ये समझते हैं कि वह कोई अच्छा काम कर ही नहीं सकता उसके विचार कभी शुद्ध नहीं होते और हर बात में वे उसे निर्णय होने से पहिले ही दोषी मान लेते हैं। इस प्रकार उसकी सदैव बड़ी निष्ठुरता से, बिना अच्छी तरह सोचे समझे, अनुचित निन्दा की जाती है। इस प्रकार की स्थिति से हानि ही हानि होती है जैसे पक्षपात रहित आलोचना से लाभ ही लाभ होता है। इस से तबियत झुँझला उठती है, आदमी का दिल टूट जाता है और उसके पक्षपाती यहाँ तक उसकी आलोचना से मुक्ति चाहने लगते हैं जो असंगत मालूम होती है।

इस केअनन्तर मि० मॉन्टेगू ने मि० राम से मक्डानल्ड की भारत सम्बन्धी पुस्तक "भारत की जागृति" के विषय में बहुत कुछ कह कर अपने भाषण को समाप्त किया।



मेसोपोटेमिया कमीशन की रिपोर्ट पर व्याख्यान

कामन्स सभा—१२ जुलाई, १९१७



र्लमेन्ट का ध्यान मैं सब से पहिले इस ओर दिलाता हूँ कि इस समर के सम्बन्ध में यह दूसरी घटना है जिसके वादाविवाद में राजनीतिज्ञों, वीर सिपाहियों, डाक्टरों व सरकारी नौकरों की कठोर भर्त्सना की जा रही है। इस देश को, जब युद्ध आरम्भ हुआ था, इस प्रकार के समर की कोई सम्भावना न थी और न यह इस प्रकार के भीषण संग्राम के लिये उस समय तय्यार ही था। पर तो भी यह देश, किसी न किसी उपाय से इन ग़लतियों वा भ्रान्तियों से निकलता हुआ और स्वदोषदर्शी समय की अड़चनों को झेलता हुआ, आज उस उन्नत अवस्था को प्राप्त है कि इसका नाम ही शत्रुओं के हृदयों को कँपा देता है, जर्मनों के शत्रुओं में यही सर्व श्रेष्ठ है, और सब से अधिक सफलता भी इसी देश को हुई है। मुझे यह एक ही बात सब से अधिक ध्यान देने योग्य जान पड़ती है। इस कमीशन की रिपोर्ट की बदौलत हम इस समर के एक ऐसे आक्रमण की

एक कला का विचार कर रहे हैं जिसमें हमें सब से अधिक सफलता का सुख मिला है। यह आक्रमण ऐसा है जिसमें हमने जो हमारा लक्ष्य था प्राप्त कर लिया है। आज ब्रिटिश जाति का झंडा बगदाद पर उड़ रहा है। कहिये! क्या इस के जोड़ की सफलता कहीं और भी प्राप्त हुई है। जेनरल मॉड ने जो विजय प्राप्त की है उसी के आरम्भ से इस घटना का भी सम्बन्ध है। मैं अन्त में बोलने वाले माननीय सज्जन व सामने की पिछली बेंच से बोलने वाले वीर मित्र (कर्नल सर यम० साइक्स) से पूर्णतः सहमत हूँ। इस तरह के कमीशन बिठाने से अनेक भयङ्कर हानियाँ होती हैं। जैसा मेरे माननीय व वीर मित्र ने कहा है कि कमीशन को अनुसंधान-मर्यादा के अनुसार कार्य करना पड़ता है। यह कमीशन भी उसी प्रकार कार्य करने के लिये बाध्य थी जिस प्रकार इस समर के समय में हमारे 'मित्रों' ने कार्य किया है। इस कारण विचारणीय विषय के साथ संसार के भिन्न भिन्न भागों में जो घटनायें घटित हुई हैं उनका भी समावेश करके परिस्थिति का सच्चा चित्र दिखाने के बजाय इस कमीशन को चित्र के एक एक टुकड़े का विचार अलग अलग करना पड़ा है। खैर! अगर हमारी जय अन्त तक होती गई होती और जेनरल निक्सन पराजय का कष्ट उठाये बिना ही बगदाद पहुँच गये होते तो क्या मेसोपोटेमिया कमीशन बिठाने का अवसर आता। पर तो भी इस बात पर किसी ने कुछ नहीं कहा कि टेसिफन के युद्ध के पश्चात्—मैं समझता हूँ कि मैं गलती नहीं कर रहा—गैलीपोली से सेना हटा ली गई थी और प्रायद्वीप में जो तुर्की सेना फँसी हुई थी उसके खाली हो जाने से परिस्थिति में यह परिवर्तन हुआ। यही कमीशन के सम्बन्ध में मेरी

पहिली आलोचना है कि हम इस संसार व्यापी समर के समय केवल एक युद्ध-क्षेत्र का विचार करके परिस्थिति का सच्चा चित्र नहीं खींच सकते। और दूसरी आपत्ति जो मुझे इस प्रकार के कमीशनों के सम्बन्ध में है वह आज के तीसरे पहर के विवाद में भली प्रकार व्यक्त हो चुकी है। कमीशन की रिपोर्ट का, जो कि सामयिक अवस्था के अनुसार बिना गवाहों के बयान के प्रकाशित की गई है, यह फल हुआ है कि ऐसे लोगों के विरुद्ध कठोर दोषारोपण किये गये हैं जिन्हें यह जानने का अवसर ही नहीं मिला है कि उनके विरुद्ध क्या शहादत है।

अब अवस्था यह है कि अगर आप इन लोगों को किसी प्रकार का दण्ड देना चाहें तो आपको उन कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा जिनका उल्लेख मेरे माननीय व विद्वान मित्र इससे पहिले तीसरे पहर के समय कह चुके हैं। और मेरा निवेदन यह है कि यदि इस विषय में और अधिक छानबीन कराना चाहते हैं तो अच्छा होता कि अभी इस प्रश्न को आप उठाते ही नहीं। अब आप इस विषय को चाहे जिस प्रकार की अदालत में विचार के लिये भेजें उस न्याया-लय पर आज के वादाविवाद का और उस वादाविवाद का जो सर्वसाधारण में हुआ है अवश्य प्रभाव पड़ेगा। मैं अपने बगल में बैठे हुए माननीय व विद्वान मित्र के प्रस्ताव से सहमत हूं और दो प्रस्तावों में से उस प्रस्ताव को जो मान-नीय अटर्नी-जेनरल ने किया है श्रेयस्कर मानता हूं। मेरी तीसरी आपत्ति यह है कि अनुसंधान-मर्यादा में कमीशन को यह आदेश दिया गया है कि उत्तरदायित्व का भार वह राजकीय विभागों पर रक्खे पर कमीशन ने ऐसा न करके प्रधान प्रधान

व्यक्तियों को ही उत्तरदाता समझा है। इस ढँग से पार्लमेन्ट व जनता दोनों सरकारी नौकरों में मिल-जुल कर काम करने की शक्ति व दायित्व बुद्धि का नाश कर रहे हैं। अब लोग कागज और स्याही में हुक्म चाहने लगे हैं, अब लोग पत्र व 'मिनट' लिख कर अपने बचाव की सूरत कर रहे हैं, अब लोग परामर्श देने में डरते हैं, क्योंकि उन्हें कमीशन का डर बना ही रहता है। पुराने नियमों के अनुसार प्रत्येक विभाग का पार्लमेन्टरी प्रधान ही उस विभाग का उत्तरदाता समझा जाता था और अपनी शक्ति के घटाटोप का आश्रय देकर उन लोगों की रक्षा करता था जो उसके लिये कार्य करते थे। क्या अब यह प्रथा समूल नष्ट हो गई है? अब साहस व उत्साह के साथ काम करने पर भी इस आदमी और उस आदमी को फटकार बताई जा रही है। मुझे विश्वास है कि आप लोग इस ढँग से काम करके अपने शासन-तन्त्र की वह हानि कर रहे हैं जिसकी पूर्ति करना कठिन हो जायगा, और आपको इस ढँग से काम करने में जो लाभ होने की सम्भावना हो उसके साथ इस हानि को भी तोल लेना चाहिये।

आक्रमण के अमुक अंश में हमें सफलता नहीं हुई बस इतने ही के लिये हमें उन लोगों को दोषी नहीं कहना चाहिये जिनका इसमें हाँथ था। हमारे लिये यह उचित नहीं कि हम अपने नौकरों को सफलता न प्राप्त होने के कारण दण्ड दें। वास्तव में इस बग़दाद के आक्रमण की तय्यारी व योजना में जो अनिष्टकारी दोष थे वह कब प्रगट हुये? मेरे कहने का यह तात्पर्य नहीं है कि सफलता प्राप्त करने के लिये जैसी तय्यारी चाहिये उस तय्यारी में किसी प्रकार की त्रुटि न थी। थी, त्रुटि थी, भयङ्कर त्रुटि थी। पर मेरे कहने का

तात्पर्य यह है कि अगर टेसिफन के युद्ध में पराजय न हुई होती और जेनरल निक्सन बग़दाद हस्तगत करने में कृतकार्य हुए होते तो सेना के पीछे हटने में जिन असुविधाओं का सामना करना पड़ा न करना पड़ता। इस कारण सब से कठोर अपराध जो आप जेनरल निक्सन पर लगा सकते हैं वह यह है कि विजय-श्री वरण करने में वह सफल मनोरथ न हो सके और अपने को कठिन जोखिमों में डाला। मुझे विश्वास है कि अगर आप जोखिमों से डरेंगे तो आप जर्मनी को कभी परास्त न कर सकेंगे। किन्तु कामन्स सभा की वायु—कामन्स सभा की वायु न भी सही—पर समाचार-पत्रों की वायु तो ऐसी हो रही है जो लोगों को पुकार पुकार कर स्पष्ट शब्दों में यही अनुरोध कर रही है कि देखो! अपने को जोखिम में न डालो। मान लीजिये—परमेश्वर करे ऐसा कभी न हो,—पैलेस्टाइन के मामलों की जाँच के लिये भी इसी प्रकार का एक कमीशन बिठाया गया। फल यह होगा कि अगर एक के विषय में यह प्रगट हुआ है कि आक्रमण करने में बहुत जल्दी की गई तो दूसरी के विषय में यह प्रगट होगा कि आक्रमण करने में आवश्यकता से अधिक देर की गई। आप लोगों में से किसी ने रिपोर्ट का पृष्ठ १८ पैरा ६ पढ़ा है? इस पैरा में नासरियेह की ओर बढ़ते हुए जेनरल निक्सन का वर्णन है। इस पैरा में लिखा है—

"यद्यपि गर्मी असह्य थी तो भी जेनरल निक्सन ने उस साहसिक कार्य के करने का निश्चय किया। मेजर जेनरल गौरिंग जो इस आक्रमणकारी सैन्यदल के नेता थे नासरियेह को हस्त-गत करने में २५ जुलाई को कृतकार्य हुए। यहाँ उन्होंने ९५० सैनिकों को क़ैद किया १७ तोपें छीनीं और बहुत सा लूट का

माल पाया। इस आक्रमण का सूत्रपात वहाँ पर उपस्थित जेनरल ने किया था, कमान्डर-इन-चीफ व वाइसराय ने इस का समर्थन किया था और भारत-मंत्री की भी सम्मति थी। वह साहसिक कार्य हमारी दृष्टि में राजनैतिक व सामरिक विचार से अनुचित नहीं था। अफ़सर व सिपाही सब मिला कर हमारे ५२३ सैनिक इसमें मारे गये।"

इस समर में कठोर साहस व चमत्कारिक चतुरता से सम्पादन किये हुए वीर कार्यों में से यह भी एक कार्य है जो इस रूखी व अलंकार शून्य भाषा में यहाँ पर वर्णन किया गया है। इस वीर कार्य को जेनरल निक्सन ने ही किया था। वीर निक्सन ने अपने देश की अच्छी सेवा की है, योग्यता के साथ की है और आपके सहायता प्राप्त उत्तराधिकारियों ने यद्यपि अधिक सफलता प्राप्त की है पर इस सफलता के लिये भूमि तैय्यार करने का आवश्यक कार्य जेनरल निक्सन ने ही किया था। टेसिफन के युद्ध के बाद होने वाली केवल एक ही घटना के कारण हमें वीर निक्सन का अनादर नहीं करना चाहिये, दण्डभागी भी न बनाना चाहिए और सेना से निकाल बाहर करने का अनौचित्य भी न दिखाना चाहिये। हमें, इस वीर सैनिक ने अपने देश की जो उत्तम सेवा की है उसके लिये, उसका मान करना चाहिये।

सरजौन निक्सन के बाद अब मैं लार्ड हार्डिञ्ज के विषय में कुछ कहूँगा। भारत में होने वाली अभी हाल की घटनाओं का जिसे ज्ञान है उसे इस विषय में किसी प्रकार का सन्देह हो ही नहीं सकता कि लार्ड हार्डिञ्ज ने जिस समय भारत छोड़ा वह—क्या राजा क्या प्रजा—सभी भारतवासियों

की राय में वर्तमान समय के सब से अधिक लोक-प्रिय वाइसराय थे। इनसे पहिले भारत में इनसे भी अधिक समर्थ वाइसराय रह चुके थे, पर जिस समय इन्होंने भारत की भूमि में पदार्पण किया इन्होंने देखा कि असन्तोष की अग्नि चारों ओर जल रही है, लोकमत का अनादर किया गया है, उसकी अधिकारी-वर्ग ने अवहेलना की है। इन्होंने अपनी लाटगरी के आरम्भ से लेकर अन्त तक इस प्रकार अपने को प्रगट किया कि भारतवासियों को भरोसा हो गया कि उन्हें इनकी सहायता व सहानुभूति भारत में ही नहीं, बल्कि पृथ्वी में जहाँ कहीं भारतवासी होंगे प्राप्त हो सकेगी; और जैसा कि मेरे माननीय मित्र (मि० चेम्बरलेन) ने कहा है, यह अपने कार्यकाल के अन्त तक—जो बढ़ा भी दिया गया था—अपने कर्त्तव्य स्थान पर निर्भय रूप से डटे रहे, यद्यपि इनकी हत्या करने का उद्योग किया गया था और इन्हें अपने पुत्र व स्त्री की मृत्यु का दारुण दुःख भी था। इस प्रकार इन्होंने जिस समय विदाई ली उस समय तक यह भारत के लिये बहुत कुछ कार्य सम्पादन कर चुके थे। पर इसे कौन पूछता है, इस रिपोर्ट में इनकी केवल इसलिये निन्दा की गई है कि इन्होंने उन लोगों के परामर्श पर आवश्यकता से अधिक क्यों श्रद्धा दिखाई जो लोग इन्हें सामरिक विषयों में परामर्श देने के लिये चुने गये थे। एक राजनीतिज्ञ पुरुष और वीर सैनिक में किस प्रकार का सम्बन्ध-बन्धन होना चाहिये यह उन प्रश्नों में से है जिनका निश्चयात्मक रूप में इस देश ने अभी तक कोई निश्चय नहीं कर पाया। एक ही दिन के निकले हुए दो पत्रों में—कभी कभी तो ऐसा होता है कि एक ही पत्र में—आपको एक स्थान में यह पढ़ने को मिलेगा कि सामरिक परामर्शदाताओं

के परामर्श की अवहेलना करने व उनके कार्य में किसी प्रकार की बाधा देने के कारण गवर्नमेन्ट की तीव्र आलोचना की गई है और दूसरे पत्र या एक ही पत्र में दूसरे स्थान पर आपको यह आदेश मिलेगा कि गवर्नमेन्ट के लिये यह आवश्यक है कि वह अपने सामरिक परामर्शदाताओं के कार्यों की आलोचना करें, उनके कार्य में बाधा दें और आवश्यक प्रतीत हो तो उनके परामर्श के विरुद्ध भी आचरण करें। यह दोनों आलोचनायें एक दूसरे के विरुद्ध हैं; और जहाँ तक मुझे ज्ञात है अभी तक इस देश में किसी गवर्नमेन्ट ने यह निर्णय नहीं किया है कि राजनीतिज्ञ और सैनिक इन दोनों के उत्तरदायित्व में क्या सम्बन्ध होना चाहिये। लार्ड हार्डिञ्ज ने जो भूल की है—यदि आप उसे भूल कहना ही चाहते हैं—तो वह वैसी ही भूल है जैसी मेरे माननीय मित्र ने लार्ड फ्रेञ्च और सर डगलस हेग पर भरोसा करने से की है; और मैं समझता हूँ कि ऐसी ही भूल नवीन प्रधान-मंत्री भी सर डगलस हेग के परामर्श के अनुसार कार्य करके कर रहे हैं। यदि आप आज्ञा दें तो एक उदाहरण देकर यह स्पष्ट कर दूँ कि मेरे कहने का क्या आशय है। अभी कल की बात है कि पार्लामेन्ट में कहा गया था कि लन्डन शहर को दुश्मनों के हवाई-जहाज़ों के आक्रमण से रक्षित रखने के प्रबन्ध का अच्छा व बुरा होना हवाई-जहाज़ों की उस संख्या पर अवलम्बित है जो संख्या युद्ध-क्षेत्र के लिये आवश्यक समझी जायगी। आपको यह सूचना कौन देगा कि फ्रान्स में इतने वायुयानों की आवश्यकता है? आप कहेंगे—कमान्डर-इन-चीफ।

मान लीजिये बाद को एक कमेटी जांच करने के लिये

बिठाई गई और उसे ज्ञात हुआ कि एक ख़ास महीने में—मैं किसी पर आक्षेप नहीं कर रहा हूँ—कुछ वायु-यान जो लन्डन शहर की रक्षा करने के काम में लाये जा सकते थे, युद्ध-क्षेत्र के किसी भाग में निरर्थक डाल रक्खे गये थे। अब प्रश्न यह है कि इस भूल का उत्तरदाता कौन समझा जायगा ?—सर डगलस हेग या प्रधान-मंत्री। यदि कोई राजनीतिज्ञ अपने परामर्शदाताओं का भरोसा नहीं करना चाहता तो उसके लिये और कौनसा मार्ग खाली है? आप कहेंगे अगर उसे उन का भरोसा नहीं है तो उसे उनके स्थान में दूसरे परामर्शदाता नियुक्त करना चाहिये। मेरे कहने का आशय यह है कि लार्ड हार्डिंज का सर बीचम्प डफ पर भरोसा रखना उसी प्रकार है जैसे मेरे सामने बैठे हुए माननीय मित्र (लायेड जार्ज) का। इस कारण लार्ड हार्डिंज के साथ सब से निराले ढंग का बर्ताव करना अनुचित होगा। मेरे विचार से असली दोषारोपण जो भारत-सरकार के विरुद्ध किया जा सकता है उसमें मैं लार्ड हार्डिंज, मि० चेम्बरलेन और आपसे पहिले भारत-मन्त्री के पद को सुशोभित करने वाले लार्ड क्रू को भी सम्मिलित देखना चाहता हूँ।

किसी घटना से शिक्षा ग्रहण करके भविष्य के लिये बुद्धिमान हो जाना कठिन नहीं है। इस कारण भारत-शासन में जो दोष मैं समझता हूँ वह यह है,–मैं समझता हूँ कि युद्ध के आरम्भ होने पर पहिले कुछ दिन तक भारत की राजभक्ति व सहकारिता पर बहुत ही अधिक सन्देह किया गया था। लन्डन का टाइम्स पत्र महीनों प्रतिदिन लेख दे देकर यह दिखलाता रहा था कि भारत में राजविद्रोह की आग जल रही है। इसमें सन्देह नहीं कि इस कामन्स सभा के वादा-

विवादों से भी यही भाव अधिकतर प्रगट होता रहा था। इन सब बातों ने जर्मनों के हृदय में भी यह ग़लत ख़्याल पैदा कर दिया कि भारत में अराजकता फैली हुई है। मुझे जहाँ तक ज्ञात है गवर्नमेन्ट ने जान बूझ कर यह नीति अवलम्बन की थी कि इस युद्ध में भारत से जितनी कम सहायता ली जाय उतना ही अच्छा होगा। हमारी नीति यह थी कि भारत से युद्ध का सम्बन्ध न होने पावे। गवर्नमेन्ट ने यह निश्चय किया था कि भारत की सेना से हम फ्रांस में काम लेंगे और भारत के सिविलियनों को हम ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की सेवा के लिये उधार ले लेंगे। पर भारत एक देश है, इस विचार से उसके लिये केवल इतना ही कार्य करना अलम् होगा कि वह अपने सीमा प्रान्तों की रक्षा करले और महाद्वीप के समान अपनी विस्तृत भूमि में शान्ति-भङ्ग न होने दे। देखिये! भारत पर कितना गुरुतर भार डाला गया था!!

इसके अतिरिक्त इस समर के सम्बन्ध में इस देश को अपनी ओर से और कुछ नहीं करना था। इस देश से समर के लिये रुपया जुटा कर भी सहायता करने के लिये नहीं कहा गया यद्यपि भारतवासियों ने समर के ख़र्च में भाग लेने की अनुमति पाने के लिये पार्लामेन्ट से प्रार्थना भी की थी। मुझे ज्ञात हुआ है कि पहिले तो बङ्गाल से कुछ कार्यों के लिये वालेन्टियर माँगे गये थे पर बाद को उन्हें यह सूचना दी गई कि तुम लोगों की हमें ज़रूरत नहीं है। जो कुछ मैंने कहा है वह समर के आरम्भ के समय की नीति के विषय में कहा है। उस समय की नीति का मर्म यही था कि हमें उस समय सन्देह था कि इस समर में भारत हमारा हाँथ बटावेगा या नहीं, भारत का हमें विश्वास न था और विश्वास करने का

हम साहस भी नहीं कर सकते थे। इसी कारण हम भारत को समर से अलग रखने के पक्षपाती थे। पर इसके बाद जो घटनायें हुईं उनसे यह प्रमाणित हो गया कि भारतवासी इस समर में सम्मिलित होने के लिये उत्सुक थे, और समर के आरम्भ से लेकर अब तक भारतवासियों से जो सहायता मिली है वह भारत-सरकार से भी नहीं मिली और सहायता देने की जितनी अधिक इच्छा इन्होंने दिखाई है भारत-सरकार ने भी नहीं दिखाई।

जिस समय भारत में इस प्रकार की परिस्थिति मूर्तिमान हो चुकी थी—भारतीय सेना फ्रांस के युद्ध-क्षेत्र के लिये जा चुकी थी, भारतीय सिवीलियन यहाँ पर सेवा देने आ गये थे, और लार्ड हार्डिञ्ज के शब्दों में "भारत के शरीर से रुधिर खींच लिये जाने के कारण उसका वर्ण विवर्ण हो चुका था" हमारी नीति में एकाएक परिवर्तन हुआ और बगदाद विजय करने के लिये यह सैन्यदल भेजने का निश्चय किया गया। हमारी नीति में तो एकाएक परिवर्तन हो गया, पर जहाँ तक मैं समझता हूँ, उस गवर्नमेन्ट व राजतन्त्र का जिसका सङ्गठन शान्ति के समय देश का शासन करने के लिये किया गया था, परिवर्तित नीति के अनुसार सामरिक कार्य करने के योग्य बनाने का कोई उद्योग नहीं किया गया; और यह सामरिक कार्य भी ऐसा वैसा नहीं—शत्रु के देश में घुस कर आक्रमण करने का। एक ओर तो घर में सामरिक उपकरणों की कमी और दूसरी ओर यह आवश्यकता कि जो सैन्यदल भेजा जाय वह इस देश व डुमीनियन्स के सैन्यदल के समान ही सामरिक उपकरणों से पूर्णतया सुसज्जित हो। इसका फल यह हुआ कि गवर्नमेन्ट की मैशीन उलट गई।

इस रिपोर्ट से जो तात्पर्य मैं निकालता हूँ वास्तव में यही है। इस देश में व डुमीनियन्स में गवर्नमेन्ट की मैशिनरी कानून की ज़ञ्जीरों से जकड़ी हुई नहीं हैं और यही कारण है कि वह इच्छानुसार मोड़ी जा सकती है, यही कारण है कि उनमें आवश्यक सुधार करने के लिये स्थान है और यही कारण है कि वह शान्ति के समय शासन करने का काम देते हुए भी समर उपस्थित होने पर युद्ध कार्य करने वाली बन जाती हैं। यह भारत-सरकार ही एक ऐसी गवर्नमेन्ट है जिसमें सुधार के लिये स्थान नहीं है। इसका कारण यह है कि यह कानून की बुनियाद पर खड़ी की गई है जिसके एक एक अक्षर का पालन करना आवश्यक है। इस प्रकार वर्तमान समय के कार्यों के लिये भारत-सरकार बिलकुल निकम्मी है—इसमें काठ के गुण अधिक हैं, लोहे के गुण अधिक है, पर रबड़ का गुण इसमें नहीं है और बाबा आदम के ज़माने की पुरानी है। वर्तमान समय की आवश्यकताओं का विचार करके मुझे विश्वास है कि इस भारत-सरकार का कोई भी हिमायती न होगा। इससे अधिक कहने की आवश्यकता नहीं। गदर के बाद से अब तक कोई दुर्घटना नहीं हुई, इस कारण जनता का ध्यान इधर नहीं गया। भारत-सरकार का सङ्गठन बिलकुल निकम्मा है, यह प्रगट करने के लिये ऐसी ही दुर्घटना का होना आवश्यक था।

मुझे अब तक स्मरण है कि जब मैंने पार्लामेन्ट में पहिले पहिल प्रवेश किया था उस समय मेरे सामने बैठे हुए मित्र—आशा है आप पुरानी बात स्मरण कराने की मेरी इस धृष्टता को क्षमा करेंगे—और मैं, एक ऐसी कमेटी के मेम्बर थे जैसी पार्लामेन्ट के मेम्बर बहुधा बना लिया करते हैं। उन दिनों

आप अपना अधिक समय लोगों को यह समझाने में बिताते थे कि उन्हें भारत सम्बन्धी प्रश्नों पर अधिक ध्यान देना चाहिये, और उस देश के प्रश्नों पर जिस समय कामन्स सभा में वादाविवाद हो उन्हें उपस्थित रहने के लिये उत्साहित करते फिरते थे। उन लोगों में मैं भी एक था जिन्हें आपने लार्ड मॉर्ले के शासनकाल के वादाविवादों में उपस्थित रहने के लिये राज़ी भी कर लिया था। पर क्या आपको अपने काम में सफलता हुई थी? समर के पहिले भारतीय बजट पेश होने पर कामन्स सभा में जो वादाविवाद होते थे क्या उनका स्मरण है? उस दिन सभा भवन जन शून्य रहता था। भारत की किसी को चिन्ता ही न थी। वादाविवादों पर एक तो वह लोग ध्यान देते थे जिन्हें उनके शत्रु कभी कभी "ब्यूरोक्रैट्स" कह कर सम्बोधन करते हैं और दूसरे लोग वह थे जिनके शत्रु कभी कभी उन्हें "राजद्रोही" कह कर सम्बोधन करते हैं। होते होते नौबत यहाँ तक पहुँच गई थी कि लोग भारतीय प्रश्नों के वादाविवाद में भाग लेना निन्दनीय समझने लगे थे। भारतीय प्रश्नों का महत्व लोगों के हृदय में अङ्कित करने के लिये इसी प्रकार की एक भयङ्कर दुर्घटना होने की आवश्यकता थी। इसके लिये क्या हमें कामन्स सभा को दोष देना चाहिये? भारतीय वादाविवादों में था ही क्या? इन भारत सम्बन्धी वादाविवादों का होना केवल रस्म पूरी करना था। इनका प्रभाव भारत में होने वाले कार्यों में नाम मात्र को भी न पड़ता था। इनमें तो उन कार्यों पर विवाद होता था जो विवाद होने से पहिले ही हो जाते थे। सामने की बेन्चों में बैठे हुए सज्जनों में, सम्भवतः डची-आफ़-लन्कास्टर के चन्सलर को छोड़ कर, भारत-मंत्री ही ऐसे हैं जो

अपनी तनख्वाह पार्लामेन्ट से नहीं पाते। आप लोग इस अनुचित रीति को किस प्रकार उचित कहने का दावा करेंगे, यह मैं नहीं समझ सकता। भारत-मंत्री भी दूसरे मंत्रियों की समान कामन्स सभा में अपने ख़र्च का चिट्ठा लेकर सभा की सम्मति ग्रहण करने के लिये क्यों उपस्थित नहीं होता (वह कामन्स सभा को ख़र्च करने के बाद सिर्फ़ हिसाब सुना देता है)।

मि० डीलन—मैंने यही बात इस सभा में न मालूम कै बार कही है।

मि० मॉन्टेगू—मुझे सब ज्ञात है। मैं इस अनुचित कार्रवाई के लिये किसी को दोष नहीं दे रहा। इस समय जो कुछ मैं कह रहा हूँ वह भारत-सरकार की जड़ता प्रगट हो जाने से जो प्रकाश पड़ा है उसका विचार करके कह रहा हूँ।

उन अनुचित कार्रवाइयों पर जिनका किसी प्रकार समर्थन नहीं किया जा सकता, भूतकाल में आपने चाहे जितनी चमकदार कलई चढ़ाई हो, पर अब वह समय आ गया है कि इनमें परिवर्तन किया जाय। क्या माननीय मेम्बर मेरी इस सुधार सम्बन्धी वकालत को पसन्द नहीं करते?

मि० डीलन—बीस वर्ष से हम लोगों का एक छोटा दल यह माँगता आया है कि भारत-मंत्री का वेतन एस्टिमेट्स में शामिल कर दिया जाय, पर सामने की दो बेन्चों को सुशोभित करने वाले सज्जनों ने सदैव मिलकर हमारी इस इच्छा को सफल नहीं होने दिया।

सर जे० डी० रीस—वादाविवाद के स्वर को देख कर क्या उनका ऐसा करना अनुचित था।

मि० डीलन—यह आपकी राय होगी।

मि० एस० मैकनेल—आपने (सर जे० डी० रीस) वादा-विवाद के इस स्वर को उत्पन्न करने में बहुत भाग लिया है।

मि० मॉन्टेगू—उन वादाविवादों का स्वर झूँठा, सार-रहित, और नपुंसक था। अगर भारत सम्बन्धी एस्टिमेट्स पर, परराष्ट्र सचिव व कलोनियों के सचिव के एस्टिमेट्स की भाँति, इस कामन्स सभा में वादाविवाद होता होता तो वह भी वैसे ही उत्तम होते जैसे उत्तम परराष्ट्र सम्बन्धी वादाविवाद होते हैं। ख़ैर! यह बतलाइये कि इनमें अन्तर क्या है? क्या आस्ट्रेलिया निवासियों से यह कभी कहा गया है कि उन्हें अपनी कौलोनी के सेक्रेटरी का वेतन देना चाहिये? तब क्या कारण है कि चार्ल्स स्ट्रीट में जो इमारत है उसका (इन्डिया आफिस का) ख़र्च यहाँ तक कि उस इमारत को बनाने का ख़र्च भी भारतीय कर-दाताओं का बोझ बढ़ाने वाला हो? यह ख़र्च कामन्स सभा और इस देश के लोगों से क्यों न लिया जाय? इस व्यवस्था से जो असुविधा होती है उसका एक उदाहरण देने के लिये मैं आप लोगों का ध्यान उस वादाविवाद की ओर आकर्षित करता हूँ जो रुई के कर के सम्बन्ध में इसी वर्ष इस सभा में हुआ है। रुई पर किसी समय कर बिठाया गया था, पर अब उसके उठाने का इस समय कोई उचित मार्ग ही नहीं मिलता। इसी भाव से हम भारतीय प्रश्नों पर वादाविवाद करते हैं। आप लोगों को नीति के निश्चय करने का अवसर ही नहीं है। कभी कभी यह कहा जाता है कि एक डेमोक्रैसी साम्राज्य का शासन

नहीं कर सकती। पर मेरा कहना यह है कि कम से कम इस डेमोक्रैसी को अब तक कार्य हाथ में लेकर अपनी सामर्थ्य जानने का अवसर ही नहीं मिला। लेकिन कामन्स सभा यदि आज्ञा भी दे तो भी भारत-मंत्री को कार्य करने की स्वतन्त्रता नहीं है।

भारत की उन्नति व अवनति से घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाले विषयों में काउन्सिल अपने बहुमत के अस्त्र से भारत-मंत्री की नीति को हनन करने की सामर्थ्य रखती है। मुझसे यह कहा जा सकता है कि ऐसे बहुत ही कम अवसर देखने में आये हैं जब कि काउन्सिल ने भारत-मंत्री के विरुद्ध मत दिया हो। कम से कम मुझे एक ऐसा अवसर मालूम है जब कि काउन्सिल करीब करीब इस अवस्था के समीप पहुँच गई थी और जिस अवसर पर काउन्सिल के इस कार्य से भारत-सरकार को इस प्रकार की नीति अवलम्बन करना आवश्यक हो जाता जो कि कामन्स सभा व मंत्रिमण्डल से निश्चित की हुई नीति के विरुद्ध थी। इस काउन्सिल के मेम्बर सात वर्ष के लिये नियुक्त किये जाते हैं और इनके दमन करने का केवल एक यही अस्त्र है कि एक प्रस्ताव इस आशय का लार्ड सभा व कामन्स सभा द्वारा स्वीकार किया जाय कि अमुक मेम्बर अपने कार्य से इस्तीफा दे दें। इन्डिया आफिस की जान बूझ कर इस प्रकार से रचना की गई है कि उस पर कामन्स सभा के शासन का प्रभाव न पड़े। यह इस डर से किया गया है कि कहीं बहुत ही उदार विचार रखने वाला व्यक्ति भारत-मंत्री के पद पर न आ जाय। मेरे कहने का यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि जानकार लोगों की सलाह न लेकर भी भारत-मंत्री भारत का शासन कर सकता है।

लेकिन मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि इस नवीन ज़माने में जब कि मेसोपोटेमिया कमीशन ने सब पोल खोल दी है, भारत-मंत्री को जानकार लोगों की सलाह प्राप्त करने का कोई दूसरा मार्ग निकालना चाहिये। अब ऐसे लोगों की काउन्सिल से सलाह लेना उचित न होगा जो कि भारत की बहुत दिन तक सेवा करके अपने देश को लौटते हैं और यहाँ आते ही काउन्सिल के मेम्बर बना दिये जाते हैं, यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि यह लोग बड़े लायक होते हैं। ऐसी परिस्थिति में यह आश्चर्य करने की बात नहीं है कि तारों का आना जाना यहाँ तक कि निज के तारों का आना जाना, जिनके विषय में कमीशन ने टीका टिप्पणी की है, एक प्रकार से निश्चित रीति के समान हो रहा है।

क्या इस सभा का कोई मेम्बर इन्डिया आफ़िस में काम करने की जो विचित्र पद्धति है उसे अच्छी तरह से जानता है—किस तरह से इस काउन्सिल की कमेटियाँ काम करने के लिये बैठती हैं, इस काउन्सिल की यह कमेटियाँ किस तरह से राजनैतिक प्रधानों और सिविल सरवेन्टों के बीच में मध्यस्थ का काम देती हैं और किस प्रकार एक साधारण प्रश्न सम्बन्धी कागज़ भी सिविल सर्वेन्ट के हाथों से पहिले अन्डर-सेक्रेटरी के पास आता है और किस प्रकार अन्डर-सेक्रेटरी फिर इस कागज़ को कमेटी में भेज सकता है जो इस कागज़ को फिर उसके पास भेजती है तब कहीं यह कागज़ भारत-मंत्री के पास आता है। भारत-मंत्री इस कागज़ को इन्डिया काउन्सिल में उपस्थित करता है जहाँ से फिर यह एक बार कमेटी में भेजा जा सकता है। इस प्रकार एक साधारण प्रश्न सम्बन्धी कागज़ को भी अपने जीवन में

न जाने कै बार आगे पीछे आना जाना पड़ता है। मेरे कहने का आशय यह है कि यह कार्य-पद्धति बड़ी ही दुःखकर, कार्य-क्षमता को नाश करने वाली और सुधारों की शत्रु है। इस समय इस पद्धति की पोल खुल जाने से जो प्रकाश पड़ा है उसका विचार करके अब इस पद्धति का अधिक दिन जीना ठीक नहीं है। मैं बहुत कठोर शब्दों का प्रयोग कर रहा हूँ और इस विषय में बड़ी उद्विग्नता से भी बोल रहा हूँ, क्योंकि १९१२ में लार्ड क्रू ने इस पद्धति में कुछ साधारण फेर-फार करने चाहे थे और इसी अभिप्राय से कामन्स सभा में एक बिल भी पेश किया था। पर लार्ड कर्ज़न के प्रस्ताव पर लार्ड सभा ने दूसरी आवृत्ति के समय इस बिल को स्वीकार नहीं किया। इस बिल को तैयार करने का पाप मेरे सिर मढ़ा गया था और यह अनुमान किये जाने की भी कृपा दिखाई गई थी कि मैंने अपना निज का स्वार्थ साधन करने के लिये अपने माननीय प्रधान लार्ड क्रू को इस बिल के पेश करने के लिये विवश किया था; क्योंकि इन्डिया आफ़िस की मैशिनरी मेरे स्वार्थ साधन करने के लिये ठीक न थी। इस समय की भाँति उस समय भी मेरी इच्छा यही थी कि इम्तहान करके कोई ऐसी व्यवस्था निकाली जाय जिसमें शीघ्रता से काम करने के कम से कम लक्षण तो हों। सरकारी दफ़्तर इसलिये बदनाम हैं कि उनमें काग़ज़ निरर्थक ही एक बस्ते से दूसरे बस्ते में मारे मारे फिरते हैं और बिला प्रयोजन कार्य करने में देर की जाती है। मैंने इन्डिया आफ़िस में काम किया है और दूसरे आफ़िसों में भी काम कर आया हूँ। मैं अपने अनुभव से कहता हूँ कि इन्डिया आफ़िस के कानूनी सङ्गठन के प्रभाव से इस आफ़िस में घुमा फिरा कर काम करने की जैसी विधि-

वत् पूजा होती है वैसी किसी ने स्वप्न में भी न देखी होगी।

दूसरे विषय का विचार आरम्भ करने से पहिले मैं इन्डिया आफ़िस की शासन-प्रणाली का एक नमूना आप लोगों के सामने रखना चाहता हूँ। मैं समझता हूँ कि मेसोपोटेमिया कमीशन ने इन्डिया आफ़िस के स्टोर डिपार्टमेन्ट पर यह दोषारोपण किया है कि यह बिभाग कामकाजी लोगों की तरह काम नहीं करता। इन्डिया आफ़िस के स्टोर विभाग का केवल यही काम है कि वह करोड़ों रुपये का सामान—जैसे कपड़ा इत्यादि—भारत की सेना के लिये खरीदता है। इस विभाग का प्रधान अफ़सर एक सिविल सर्वेन्ट होता है। सन् १९१२ या १९१३ में यह पद खाली हुआ। उस समय यह निश्चय किया गया कि खरीद के काम की देखभाल करने के लिये एक व्यवसायी आदमी रखना उपयुक्त होगा। इस नीति का सूत्रपात प्रधान-मंत्री ने किया था। पर व्यवसायी आदमी के इस पद पर नियुक्त करने में बहुत सी अड़चनें नज़र आईं, इस कारण उस समय एक सिविलियन इस पद पर नियुक्त कर दिया गया और यह निश्चय किया गया कि इस पद के खाली होने पर अब व्यवसायी ही नियुक्त किया जायगा। पर मेरे माननीय मित्र भारत-मंत्री ने कल मुझे यह सूचना दी है कि इस पद पर एक बार फिर सिविलियन की ही नियुक्ति की गई है।

भारत-मंत्री (मि० चेम्बरलेन)—मैंने इस निश्चय के विषय में कभी नहीं सुना।

मि० मॉन्टेगू—मेरे माननीय मित्र किसी ऐसे निश्चय के

उत्तरदाता नहीं हैं जो कि उनके पूर्वाधिकारी ने किया था। मेरा कहना यह है कि उस समय यह नीति निश्चित की गई थी कि सिविल सर्वेन्ट के स्थान में कोई व्यवसायी नियुक्त किया जायगा। इस सभा में यह सब इतिहास सुनाने से मेरा प्रयोजन यही है कि मेसोपोटेमिया कमीशन के पोल खोलने पर मैं यह सलाह अपने मित्र को देना चाहता हूँ कि इन्डिया आफ़िस का यह स्टोर विभाग तोड़ देना चाहिये। यह विभाग भारतीय सेना को कपड़ा इत्यादि पहुँचाता है और मिनिस्ट्री आफ़ म्युनीशन और वार आफ़िस अपनी सेना व 'मित्रों' की सेना को कपड़ा इत्यादि पहुँचाने का काम करता है। इन दोनों संस्थाओं के काम एक ही हैं, ऐसी अवस्था में गन्डों 'सप्लाई डिपार्टमेन्ट' रखने से क्या लाभ होगा। जितना जल्द यह 'सप्लाई डिपार्टमेन्ट' बन्द करके सब काम एक ही जगह और एक ही दफ़्तर में होगा उतना ही सामान जुटाने के कार्य में उन्नति होगी।

अब मैं भारत का शासन भारत से करने के प्रश्न का विचार करता हूँ। मेरे विचार से यह आवश्यक है कि कामन्स सभा का प्रभुत्व भारत-मंत्री पर अधिक सच्चा होना चाहिये और मैं यह भी कहूँगा कि वाइसराय को कार्य करने की अधिक स्वतन्त्रता मिलनी चाहिये, उसे भारत-मंत्री के इतना अधिक आधीन न रखना चाहिये। आप इतने बड़े देश पर तार भेज कर शासन नहीं कर सकते। इस समय वाइसराय के पास जितनी शक्ति है उससे अधिक शक्ति उसे मिलनी चाहिये। यह परामर्श देते हुए, मैं यह भी परामर्श देता हूँ कि वाइसराय की वर्तमान स्थिति में भी आपको परिवर्तन करने होंगे।

इस देश में श्रीमान् सम्राट, प्रधान-मंत्री, वैदेशिक-मंत्री और कामन्स-सभा का स्पीकर यह चार ही व्यक्ति ऐसे हैं जिनके पास इतना काम है जितना और किसी के पास न होगा। पर भारत में यही चार मनुष्यों का काम एक मनुष्य को करना पड़ता है। इस दशा में यह आशा करना कि यह व्यक्ति अपने नित्य नैमित्तिक कार्य को करता हुआ इस (बग़दाद) के आक्रमण के विषय में अच्छी तरह से एक एक बात की छानबीन करके उत्तरदायित्व के साथ उसका संचालन कर सकेगा दुराशा मात्र है। आपको ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिल सकता जो इतना अधिक कार्य कर सके। भारत में आपके शासन की मैशीन इस समय टूट गई; क्योंकि वह वर्तमान समय के झंझटी कार्यों को करने के लिये नहीं बनाई गई थी। परन्तु आप उस समय तक भारतीय शासन-तंत्र का नवीन संस्कार नहीं कर सकते, लाटगरी को कोई नवीन रूप नहीं दे सकते और इस कामन्स सभा व भारत-मंत्री की परतंत्रता से भारत-सरकार को अधिक छुटकारा भी नहीं दे सकते, जब तक आप शासकों को भारतवासियों के समक्ष अधिक उत्तरदाता नहीं बनाते। सच बात तो यह है कि मेसोपोटेमिया कमीशन ने जो प्रकाश डाला है उसकी सहायता से कुल शासन-पद्धति की छानबीन होनी चाहिये। इस कमीशन की रिपोर्ट से यह प्रमाणित हो चुका है कि भारतीय गवर्नमेन्ट में आवश्यकता से अधिक कठोरता है। सामने बैठे हुए मेरे माननीय व बीर मित्र की 'माइनोरटी रिपोर्ट' से—और अधिकतर उन प्रश्नों से जो कि आपने इस सभा में पूँछे हैं—यह प्रगट होता है कि आप भारत को पूर्ण होमरूल देने के पक्षपाती हैं। पर मुझे विश्वास नहीं है कि

भारत में अधिक लोग पूर्ण होमरूल माँगते हैं, मुझे विश्वास नहीं है कि यह सम्भव है; और मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह भारतीय शासन में जो बुराइयाँ हैं उन्हें दूर भी नहीं कर सकता।

कमान्डर वेजउड—मैं चाहता हूँ कि उन्नति करके पहुँचने का हमारा लक्ष्य होमरूल हो।

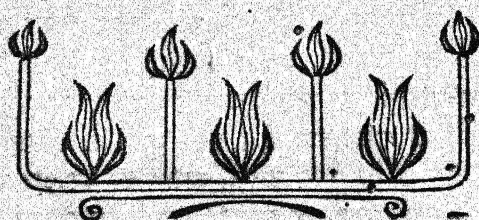
मि० मॉन्टेगू—लक्ष्य! लक्ष्य के विचार से तो दूसरा ही चित्र मेरे सामने आ जाता है। मैं यह चित्र देखता हूँ कि भारत के स्वराज्य प्राप्त डुमीनियन और प्रान्त बड़ी बड़ी प्रिन्सिपालिटियों के—वर्तमान और नई प्रिन्सिपालिटियों के साथ भली प्रकार सुसङ्गठित और बराबरी का दर्जा रखने वाले हैं; परन्तु भारत एक होमरूल प्राप्त देश नहीं है बल्कि बहुत से स्वराज्य-प्राप्त प्रान्त और प्रिन्सिपालिटियों का समूह है जो कि एक सेन्ट्रल गवर्नमेन्ट द्वारा संयुक्त राज्य में सम्मिलित हैं। भारत में आपके शासन का लक्ष्य चाहे जो हो पर जिन जिन भारतवासियों से मैं मिला हूँ या पत्र-व्यवहार किया है उन सब की एक स्वर से यही माँग है कि हमें उस लक्ष्य को निश्चित रूप में प्रगट कर देना चाहिये। निश्चित रूप में लक्ष्य को प्रगट कर देने के पश्चात् प्रथम-वास्तविक-अंश आपको अभी दे देना चाहिये जिससे यह प्रगट हो जाय कि आप सचमुच कुछ सुधार करना चाहते हैं (और कोरी बातें बना कर उन्हें धोखे में नहीं डाल रहे)।

उस नवीन नीति का किसी न किसी रूप में श्रीगणेश कर देना होगा जिसके अनुसार आप भविष्य में काम करना चाहते हैं, जिसके अनुसार भारतवासियों को किसी न किसी रूप में स्वराज्य संस्थायें देने का अवसर मिलेगा, जिसके

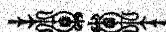
अनुसार आप उन्हें धीरे धीरे करके शासक-वर्ग का स्वामी बनायेंगे और जिसके अनुसार आप कार्यकारिणी का नवीन संस्कार करेंगे—जिसमें आपको अधिकारी वर्ग के यहाँ से स्वतन्त्र कर देने का अवसर मिलेगा; क्योंकि आप अपने अफ़सरों को ऐसी अवस्था में न डाले रक्खेंगे कि उन्हें दो तरह के आदमियों के सामने ज़िम्मेदार होना पड़े। भारत के बजाय अब तक वह इस देश (इङ्गलैण्ड) के सामने उत्तरदाता हैं और यह उसके न होने के कारण या उसके स्थान में है। जिस तरह धीरे धीरे अधिकारी भारत के सामने उत्तरदाता होते जायँगे उसी तरह उनकी ज़िम्मेदारी इस देश के सामने घटती जायगी—जैसे जैसे अधिकारियों पर भारत का प्रभुत्व बढ़ता जायगा आप इस देश का प्रभुत्व उन पर से हटा सकते हैं।

मैं ज़ोर देकर कहता हूँ कि अब तक इस तर्कहीन शासन-पद्धति को जीवित रखने के लिये आप यही उज़्र करते आये हैं कि यह पद्धति कार्यक्षम (efficient) है। अब यह प्रमाणित हो गया है कि यह कार्यक्षम नहीं है। यह भी प्रमाणित हो चुका है कि यह भारतवासियों की इच्छा प्रगट करने के लिये भी जितना चाहिये उतना 'प्लास्टिक' नहीं है और इसमें भारतवासियों को, उनके चाहने पर भी, युद्ध के लिये तय्यार करने की शक्ति नहीं है। इस युद्ध का इतिहास यह प्रमाणित करता है कि आप उनकी राजभक्ति पर अब भरोसा कर सकते हैं—चाहे अब तक आपको सन्देह ही रहा हो। यदि आप इस राजभक्ति का उपयोग करना चाहते हैं तो, आपको देश-प्रेम से लाभ उठाना चाहिये, जिस देश-प्रेम का इस समय भारत में धर्म के समान आदर है; और भारतवासियों को अपने

हानि लाभ पर—केवल वह काउन्सिलें देकर नहीं जो कि कुछ काम ही नहीं कर सकतीं बल्कि कार्यकर्ताओं पर अधिकार देकर, दिन प्रतिदिन बढ़ने वाला अधिकार देकर—शासन करने का उचित अवसर देना चाहिये। तब आपको, दूसरे समर के समय—अगर आपको कभी समर करना ही पड़ा—दूसरी बार विपत्ति-ग्रस्त होने पर और शान्ति के समय भी, सन्तुष्ट भारत के दर्शन होंगे, सहायता देने के लिये सन्नद्ध भारत के दर्शन होंगे। मि० स्पीकर आप मेरा विश्वास कीजिये यह 'एक्सपीडियेन्सी' या 'डिज़ारेबिलिटी' का प्रश्न नहीं है। इस समय जो अनुभव हुआ है उसकी सहायता से यदि आप सैकड़ों वर्ष की पुरानी और भद्दी मैशीन का संस्कार करने के लिये तैयार नहीं हैं तो मेरा विश्वास है—पूर्ण विश्वास है—कि आप भारतीय साम्राज्य के भाग्य पर शासन करने का अधिकार खो बैठेंगे।"

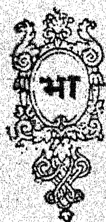


मि० मॉन्टेगू और भारत



(जुलाई, १९१७)

भारत-मंत्री नियुक्त किये जाने पर मि० मॉन्टेगू ने एक सभा में अपनी भविष्य सम्बन्धी नीति का दिग्दर्शन कराते हुए कहा—



भारत-मंत्री का उच्च पद अभी हाल में मुझे दिया गया है और कुछ घन्टे भली भाँति विचार करके मैंने यही निश्चय किया है कि इस समय जिन सज्जनों के हाथ में देश के भले बुरे का उत्तर-दायित्व है वह जिससे जो कार्य करने को कहें देश-हित के विचार से उसे वही करना चाहिये। उसे और बातों से कुछ मतलब नहीं—व्यक्तिगत व राज-नैतिक विचारों से कोई काम नहीं। इसी अनुरोध से मैंने इस पद के साथ गुरुतर भार और कठिन चिन्ताओं को स्वीकार कर लिया है।

जिस समय से मैंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया है उसी समय से सम्राट के भारतीय बन्धु-प्रजाजनों में मुझे अतिशय अनुराग रहा है। पहिले पहिल मैंने उस सिद्ध राज-नीतिज्ञ लार्ड मॉर्ले का—जिसमें विलायती सार्वजनिक जीवन के सभी उत्तम गुणों ने निवास पाया है—अन्डर-सेक्रेटरी रह

कर भारत की सेवा की थी। मैंने लार्ड क्रू के नीचे रह कर व साथ मिल कर भी काम किया है। अगर लार्ड क्रू उस निन्दा से बच गये हैं जो सार्वजनिक पुरुषों को मिला करती है तो उन्हें वह कीर्ति भी नहीं मिली जो कि आपके समान बुद्धिमान्, दूरदर्शी, व मूल्यवान सलाह देने वाले राजनीतिज्ञ को अवश्य मिलनी चाहिये। मैंने मि० चेम्बरलेन के साथ बैठ कर भी काम किया है। आपने इस समय स्वाभिमान की रक्षा के विचार से इस्तीफ़ा देकर अपने को देश का प्रेमभाजन बना लिया है, पर आपके इस कार्य से देश आपके उत्तम परामर्श से बञ्चित रहेगा इससे बड़ी हानि होगी।

मैंने वहीं से कार्य को उठाया है जहाँ पर थोड़े दिन पहिले मि० चेम्बरलेन ने छोड़ा था। कामन्स सभा के साधारण मेम्बर की अवस्था में, जब कि यह ख्याल भी नहीं था कि मुझे इन्डिया आफ़िस के किसी पद पर काम करना पड़ेगा, मैंने भारतीय मामलों के विषय में एक स्पीच दी थी। इस स्पीच में ऐसे विचारों का समावेश हुआ है जिनका मैं क़ायल था और—अब भी हूँ। मि० चेम्बरलेन ने 'हाउस' को यह सूचना दी थी कि भारतीय शासन के सुधार के सम्बन्ध में उनके, इन्डिया आफ़िस के, वाइसराय के व वाइसराय की काउन्सिल के बीच में वादाविवाद चल रहा है। मैंने इस वादाविवाद को, बिला किसी प्रकार के विघ्न बाधा के, जहाँ उन्होंने छोड़ा था वहीं से उठाया है और समय पर गवर्नमेन्ट अपनी निश्चित नीति को प्रकाशित करेगी।

इस समय प्रधानतः दो ही विषय ध्यान देने के हैं—सफलता पूर्वक इस समर को ख़त्म करना और शान्ति के समय

के लिये तय्यार होना, चाहे वह समय जब आवे। कई महीने से मैं एक देसी परिषद् का सभापति हूँ जो उन उपायों का विचार कर रही है जिनका अवलम्बन करना अपने इतिहास प्रसिद्ध श्रेष्ठ वीरों को रणक्षेत्रों से घर लाने, सांमरिक कार्य से उन्हें अवसर देने, और उन्हें उनके घर वांपस भेजने के लिये इस समर के अन्त में आवश्यक होंगे। उन लोगों के सुख दुख पर ध्यान देना जिन्होंने वीरता से युद्ध करके विजय-श्री को हस्तगत किया है हम राजनीतिज्ञों का पहिला कर्तव्य है। इस विषय के हमारे 'प्लान्स' करीब करीब तय्यार हैं और हमारी रिपोर्ट वार-आफ़िस और लेबर-मिनिस्ट्री की सहायता से शीघ्र गवर्नमेन्ट के सामने उपस्थित की जायगी।

युद्ध के उपरान्त जितना ही जल्द हम अपने शान्ति के समय के कार्यों को करने लगेंगे उतना ही हमारा भविष्य अच्छा होगा। जितना ही जल्द हमारे युद्ध से लौटे हुए वीर अपने शिल्प कार्य में लग सकेंगे उनका भविष्य उतना ही सुन्दर होगा। क्या इस युद्ध से हमें यह शिक्षा नहीं मिली कि राष्ट्रीयता का भाव, जिसे इस युद्ध ने और भी सजीव व प्रखर कर दिया है, हमें आगे बढ़ाने वाली एक ज़बरदस्त शक्ति है? अपने देश व साम्राज्य को शस्त्रों से ही नहीं बल्कि हर प्रकार की सामग्रियों के आक्रमण से भी सुरक्षित बनाना आवश्यक है। आपको युद्ध के बाद भी, आजकल की तरह, अनेक प्रकार के कष्ट व असुविधायें झेलनी पड़ेंगी। शान्ति स्थापित होने के बाद कुछ महीनों तक, चाहे जितना उद्योग हम क्यों न करें, जहाज़ों की कमी अवश्य रहेगी। जिसका अर्थ यह है कि आवश्यकतानुसार खाद्य पदार्थ व शिल्पकला के लिये कच्चा माल हमें प्राप्त न हो सकेगा। किसी को इस भ्रम

में न पड़ना चाहिये कि शान्ति होते ही हमारी सब असुवि-धाओं का अन्त हो जायगा। इस कारण जितना ही अधिक हम भविष्य में पैदा कर सकेंगे और बाहर से प्राप्त कर सकेंगे उतनी ही हमारी अवस्था अच्छी होगी।

आपने देखा होगा कि जब कभी मुझसे कोई कार्य करने को कहा जाता है तो समाचारपत्रों का एक ख़ास दल अपनी सम्मति प्रगट करके मुझे उस ज़िम्मेदारी के कार्य में सहायता पहुँचाता है। यह उनका तरीका है और इसके लिये उनके पास समय भी है। पर इसकी हम कब परवाह करते हैं। मैं अकेला नहीं हूं। वर्तमान प्रधान-मंत्री, जो कि इस समय अपने भीम कार्य को आश्चर्यजनक सफलता से कर रहे हैं; भूतपूर्व लार्ड किचनर, जिनकी बदौलत युद्ध के आरम्भ में जो कुछ हमने किया, किया; मि० बालफूर, इन्होंने अमेरिका में जो कुछ किया अभी किसी को भूला न होगा; विस्काउन्ट ग्रे, जिनकी डिप्लोमैसी ही वह मैशीन थी जिसने सभ्य जगत को एक साथ जर्मनी के विरुद्ध खड़ा कर दिया; मि० चर्चिल, जिन्होंने युद्ध के आरम्भ में जहाज़ी बेड़े को समर के लिये प्रस्तुत किया, लार्ड हैलडेन जिनके उद्योग से एक्सपि-डिशनरी फोर्स हमें प्राप्त हुई; और मि० एसक्विथ भी, जिन्हों ने अपनी नेतृत्व-कुशलता से समर के प्रथम ढाई वर्ष में देश को एकता के सूत्र में बाँध रक्खा—यह सब उदार और अनु-दार भी मेरे साथ यश और अपयश का भाग पायेंगे।

मुझे इसकी क्या परवाह है। मुझे यही कहना है कि आपको मुझ पर भरोसा है इसीके बल पर मैं अपने को देश सेवा करने का अधिकारी समझता हूं; और जबतक मुझे यह बल है तब तक मैं दूसरी बातों पर ध्यान ही नहीं देता।

मि० मॉन्टेगू ने यह कह कर अपने भाषण को समाप्त किया कि इस कौन्सिटिट्यूएन्सी (पार्लामेन्ट के किसी मेम्बर के लिये वोट देने वाले मनुष्यों की कुल जमात) और भारत के बहुत से सज्जनों ने यह प्रगट किया है कि उन्हें मुझ पर भरोसा है; इससे मुझे भी विश्वास हो गया है कि अगर मैं अपने कार्य में कृतकार्य न हूँगा तो मित्रों की सहायता न होने के कारण न हूँगा।

युगान्तर उपस्थित करने वाली २० अगस्त की घोषणा

मि० मॉन्टेगू ने भारत को दायित्व-पूर्ण स्वराज्य देने की जो घोषणा २० अगस्त, १९१७ को साम्राज्य-सरकार की ओर से प्रकाशित की थी वह यह है:—



टिश-सरकार की नीति, जिससे भारत-सरकार पूर्णतः सहमत है, यह है कि शासन के प्रत्येक भाग में भारतवासियों का सहयोग बढ़ाया जाय और ब्रिटिश साम्राज्य के एक प्रधान अङ्ग की हैसियत से भारत में दायित्व-पूर्ण शासन की उन्नतिशील सिद्धि के लिये स्वराज्य सम्बन्धी संस्थाओं का अधिक प्रचार किया जाय।

उन्होंने निश्चय कर लिया है कि इस लक्ष्य की ओर ले जाने वाले वास्तविक कार्य यथासम्भव शीघ्र आरम्भ किये

जायँगे। यह कार्य किस प्रकार से होना चाहिये,इसका विचार करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि पहिले इङ्गलैन्ड और भारत के अधिकारी आपस में स्वतन्त्रता पूर्वक परामर्श कर लें। तदनुसार ब्रिटिश-सरकार ने निश्चय किया है और सम्राट को भी यह पसन्द है कि मैं वाइसराय के निमन्त्रण को स्वीकार करके हिन्दुस्तान को जाऊँ और वहाँ वाइसराय और भारत-सरकार से इन विषयों पर विचार करूँ, वाइसराय के साथ प्रान्तिक सरकारों की सम्मतियों पर विचार करूँ और उनके साथ बैठ कर सार्वजनिक संस्थाओं तथा अन्य लोगों के प्रस्तावों को भी सुनूँ।

यह भी मैं कह देना चाहता हूँ कि इस नीति के पथ पर हमारी उन्नति क्रम क्रम से ही हो सकेगी। ब्रिटिश-सरकार और भारत-सरकार ही, जिन पर हिन्दुस्तान के निवासियों की भलाई और उन्नति की ज़िम्मेदारी है, वृद्धि करने का समय है या नहीं और किस परिमाण में वृद्धि करनी चाहिये इसका निर्णय करेंगी; और इसमें उनका पथ-प्रदर्शन उन लोगों से मिलने वाले सहयोग से होगा जिनको इस प्रकार काम करने के अवसर अब मिलेंगे और यह उस हद तक जहां तक देखा जायगा कि उनकी दायित्व बुद्धि में विश्वास किया जा सकता है। जो मन्तव्य यथासमय पार्लमेन्ट में पेश किये जायँगे उन पर विचार करने के लिये सर्व-साधारण को काफी अवसर दिया जायगा।

